

वीर सेवा मन्दिर दिल्ली



कमल मण्डल

राव न

गङ्गा

सन्मति प्रकाशन न० ४

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

डॉ० जगदीशचन्द्र जैन

M A, Ph D.



जैन संस्कृति संशोधन मण्डल
बनारस-५

१९५२

प्रकाशक—
मंत्री, जैन संस्कृति संशोधन मण्डल
बनारस—५.

दो रुपया

मुद्रक—
रामकृष्ण दास
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय प्रेस, काशी ।

निवेदन

भारतीय इतिहास की सामाजिक और राजनैतिक सामग्री जो प्राचीन जैन ग्रन्थों में बिखरी पड़ी है उसका उपयोग करके डॉ० जगदीशचन्द्र जी ने प्राचीन भारत के विषय में अपनी पुस्तक अंग्रेजी में लिखी थी। उक्त पुस्तक के लेखन के समय भारत के प्राचीन नगरों के विषय में जो सामग्री उन्हें जैनागम और पालिपिटकों में मिली उसी के आधार पर प्रस्तुत पुस्तक उन्होंने लिखी है। पुस्तक का नाम यद्यपि 'भारत के प्राचीन जैन तीर्थ' दिया है तथापि यह पुस्तक केवल जैनो के लिए ही नहीं किन्तु भारतीय प्राचीन इतिहास और भूगोल के पंडितों के लिए भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी इसमें तनिक भी मदेह नहीं। स्पष्ट है कि इसमें जैन तीर्थों के नाम में जिन नगरों का वर्णन किया है वह प्रस्तुत भारतवर्ष के प्राचीन नगरों का ही वर्णन है।

लेखक ने, जहाँ तक संभव हुआ है, उन प्राचीन नगरों का आज के नक्शे में कहीं किस रूप से स्थान है यह दिखाने का कठिन कार्य करके प्राचीन इतिहास की अनेक गुत्थियों को सुलझाने का सफल प्रयत्न किया है। इससे जैनो को ही नहीं किन्तु भारतीय इतिहास के पंडितों को भी नई ज्ञानसामग्री मिलेगी। इस दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तक का महत्त्व बहुत बढ़ गया है।

पुस्तक में भगवान् महावीर कालीन भारत का और भगवान् महावीर के विहार स्थानों का भी नक्शा दिया गया है। उसका आधार उनकी उक्त अंग्रेजी पुस्तक है। हमारी इच्छा रही कि पुस्तक में कुछ चित्र भी दिए जाते किन्तु मंडल की आर्थिक मर्यादा को देख कर वैसा नहीं किया गया। डॉ० जगदीशचन्द्र ने प्रस्तुत पुस्तक मंडल को प्रकाशनार्थ दी एनदर्थ में उनका आभार मानता हूँ।

ता० ८-२-५२

बनारस-५

}

निवेदक

दलसुख मालवणिया

मंत्री,

जैन संस्कृति संशोधन मंडल

विषयानुक्रम

प्रास्ताविक	१
१ पार्वनाथ और उनके शिष्यो का विहार	५
२ महावीर की विहार चर्या	८
३ जैन श्रमण सघ और जैनधर्म का प्रसार	१८
४ बिहार-नेपाल-उड़ीसा-बंगाल-बरमा	१९
५ उत्तर प्रदेश	२५
६ पंजाब-मिथ-काठियावाड-गुजरात-राजपुताना-मालवा-बुन्देलखण्ड	८७
७ दक्षिण—बरार-हैदराबाद-महाराष्ट्र-कोकण-आन्ध्र-द्रविड- कर्णाटक-कुर्ग आदि	६१
शब्दानुक्रमणिका	१-२०

मानचित्र

१ भगवान् महावीर के द्वारा अवलोकित स्थान	८
२ भगवान् महावीर के समय का भारत	१७

प्रास्ताविक

इतिहास में पता चलता है कि अन्य विज्ञानों की तरह भूगोल का विकास भी शनैः शनैः हुआ। ज्यों ज्यों भारत का अन्य देशों के साथ वणिज-व्यापार बढ़ा, और व्यापारी लोग वाणिज्य के लिये सुदूर देशों में गये, उन्हें दूसरे देशों की रीति-रिवाज, किस्म-किस्मियाँ आदि के जानने का अवसर मिला, और स्वदेश लौट कर उन्होंने उस ज्ञान का प्रचार किया। वर्ष में आठ महीने वनपद-वहार के लिये पर्यटन करने वाले जैन, बौद्ध आदि श्रमणों तथा परि-यात्रकों ने भी भारत के भौगोलिक ज्ञान को वृद्धिगत किया। जैन आगम ग्रन्थों की टीका-टिप्पणियाँ तथा बौद्धों की अष्टकथाओं में उत्तरापथ, दक्षिणापथ आदि के रीति-रिवाज, रहन-सहन, खेती-बारी आदि के सम्बन्ध में जो उल्लेख आते हैं उनमें उक्त कथन का समर्थन होता है।

ग्यान्-चीन में पता लगता है कि जिस भूगोल को हम पौराणिक अथवा काल्पनिक समझते हैं वह सर्वथा काल्पनिक प्रतीत नहीं होता। उदाहरण के लिये, जैन भूगोल की नील पर्वत से निकल कर पर्व समुद्र में गिरनेवाली सीता नदी का पहचान चीनी लोगों की सि-तो (Si-to) नदी से का जा सकता है, जो किसी समुद्र में न मिलकर काशगर की रेती में विलुप्त हो जाती है। इसी तरह बौद्ध ग्रन्थों में पता लगता है कि जम्बुद्वीप भारतवर्ष का और हिमवत हिमालय पर्वत का ही दूसरा नाम है। जातार्थ कथा के उल्लेखों में मालूम होता है कि प्राचीन काल में हिन्द महासागर को लवणसमुद्र कहा जाता था। इसी प्रकार ग्यान् करने से अन्य भौगोलिक स्थानों का पता लगाया जा सकता है।

यान यह हुई कि आजकल की तरह प्राचीन काल में यात्रा आदि के साधन सुलभ न होने के कारण भूगोल का व्यवस्थित अध्ययन नहीं हो सका। परिणाम यह हुआ कि जब दूरवर्ती अदृष्ट स्थानों का प्रश्न आया तो संख्यात, असंख्यात योजन आदि की कल्पना कर शास्त्रकारों ने कल्पना-समुद्र में खूब

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

गोते लगाये, जिसमें आगे चल कर भूगोल भी धर्मशास्त्र का एक अङ्ग बन गया और वह केवल श्रद्धालु भक्तों के काम की चीज रह गई।

प्राचीन तीर्थों के विषय में चर्चा करते हुए दूसरा महत्वपूर्ण बात दिगम्बर और श्वेताम्बर सम्प्रदाय के सम्बन्ध में है। आचार्य आदि जैन सूत्रों में स्पष्ट है कि महावीर के समय मच्चेल और अचेल दोनों प्रकार के श्रमण जैन संप्रदाय में रह सकते थे, यद्यपि स्वयं महावीर ने तिनकल—अचेलत्व—को ही अंगीकार किया था। उत्तराध्ययन सूत्र के अन्तगत केशी-भौतम सवाद नामक अध्ययन में पार्श्वनाथ के शिष्य केशीकुमार के पणन करने पर महावीर के गणधर गौतम स्वामी ने उत्तर दिया है कि 'हे महामुने, साधु की मूर्ति में लिङ्ग—वेप—केवल बाह्य साधन है, असली तो ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य है।'

ज्ञान पटता है कि महावीर के बाद भी जैन श्रमणों में अचेल (दिगम्बर) रहने की प्रथा जारी रहा। श्वेताम्बर ग्रन्थों में पता लगता है कि आचार्य स्थूलभद्र के शिष्य आचार्य महागिरि ने आर्य मुर्तित्व की अपने गण का भार सौंप कर तिनकल धारण किया। इसी प्रकार आर्यगर्जित ने जब अपने कुटुम्ब को दीक्षा देने की चार्ही तो उनके पिता ने दीक्षा ग्रहण करत हुए सकाच व्यक्त किया कि उन्हें अपनी पुत्री और पुत्र-वधुओं के समस्त नाम अवस्था में रहना पड़ेगा। तत्पश्चात् बुद्धकल भाष्य (ईसवी सन की लगभग चौथी शताब्दी) में पता लगता है कि महागृध्र में जैन श्रमणों के नग्न रहने की प्रथा थी और उन्हें लोग अपशकुन मानते थे।

भारतीय मूर्ति-कला के अध्ययन में पता लगता है कि सबसे पहले मौर्य-काल में यज्ञों की मूर्तियाँ निर्माण की गई थीं। जैन और बौद्ध सूत्रों में अनेक यज्ञ-मन्दिर (यज्ञावन) के उल्लेख मिलते हैं जहाँ महावीर और बुद्ध अपने विहार-काल में ठहरा करते थे। ये यज्ञ ग्राम या नगर के रक्षक माने जाते थे। छोट-बड़े सब लोग इनकी पूजा-उपासना करते थे। यज्ञों में सबसे प्राचीन मूर्ति मणिभद्र (प्रथम शताब्दी ई० पू०) की उपलब्ध हुई है। यज्ञ के पश्चात् बौद्धत्व, बुद्ध और जिन की मूर्तियाँ निर्माण की जाने लगीं। गता कनिष्क के समय की ये मूर्तियाँ मथुरा में उपलब्ध हुई हैं। बौद्धत्व की प्राचीनतम मूर्ति ईसवी सन ८ की मिली है। मथुरा के कङ्काली टीले में जा आचार्य पट्ट पर लगभग २००० वर्ष प्राचीन जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ मिली हैं वे नग्न अवस्था में हैं तथा दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों द्वारा पूजा जाता

है। इससे स्पष्ट है कि इसी सन के पर्व दिगम्बर और श्वेताम्बर मूर्तियाँ में कोई अन्तर न था। वस्तुतः उस समय तीर्थकरों या मित्रों के चरणों की पूजा जाती थी। सम्मोदशिवर हस्तिनापुर आदि तीर्थ-क्षेत्रों पर आजकल भी चरण-पादुकाएँ ही बनी हुई हैं। वास्तव में प्राचीन काल में तो शिल्पकला द्वारा सुदृढ-जीवन के चित्र अङ्कित किये गये हैं व बोधिवृक्ष, छत्र, पादुका और वर्मचक्र आदि रूपों द्वारा ही व्यक्त किये गये हैं, मूर्ति द्वारा नहीं।

१७वीं सदी के श्वेताम्बर विद्वान् पण्डित धर्मसागर उपाध्याय ने अपनी प्रवचन परीक्षा में लिखा है कि जब गिरनार और शत्रुजय तीर्थों पर दिगम्बर और श्वेताम्बरों का विवाद हुआ और दोनों स्थानों पर श्वेताम्बरों का अधिकार न गया तो आगे कोई झगडा न होने देने के लिए श्वेताम्बर मध्य ने निश्चय किया कि अब से १०० प्रतिमाओं बनवाई जायें, उनके पादमूल में वस्त्र का चिह्न बना दिया जाय। उस समय में दिगम्बरियों ने भी अपनी प्रतिमाओं को स्पष्ट नम्र बनाना शुरू कर दिया। इससे मालूम होता है कि उक्त विवाद के पहले दिगम्बर और श्वेताम्बर सम्प्रदायों की प्रतिमाओं में कोई भेद ही था, दोनों एकत्र होकर पूजा-उपासना करते थे। इतना ही नहीं, उस समय एक ही मन्दिर में इन्द्रमाला की चाली चाली जाती थी जिसे दोनों सम्प्रदायों के लोग पना देकर स्वीकृत करते थे।

नपागच्छ के श्वेताम्बर मुनि शीलविजय जी ने गि० सं० १७३१-३२ में 'विज्ञान' की यात्रा करते हुए अपनी तीर्थमाला में जैनवट्टी, मूडविट्टी, कागकल आदि दिगम्बरीय तीर्थों का परिचय दिया है। इससे मालूम होता है कि उन्होंने इन तीर्थों की भक्तिभाव से वन्दना की थी। अक्सर के समकालीन श्वेताम्बर विद्वान् हीरविजय मुनि ने भी मथुरा में लौटते हुए खालियर की वायनगर्जा दिगम्बर मूर्ति के दर्शन किए थे। इससे मालूम होता है कि अभी थोड़े वय तक दिगम्बर और श्वेताम्बर एक दूसरे के मन्दिरों में आते-जाते थे, और वे साम्प्रदायिक व्यामोह में मुक्त थे।

अष्टापद (कैलास) चम्पा, पावा, सम्मोदशिवर, ऊर्जयन्त (गिरनार) और शत्रुजय आदि तीर्थ सर्वमान्य तीर्थ समझे जाते हैं, और इन क्षेत्रों का दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों समान रूप में पूजते आए हैं, इससे पता लगता है कि दोनों के तीर्थ-स्थान एक थे। लेकिन आगे चल कर दोनों सम्प्रदायों ने अपने अपने ताया का निमाण आरम्भ कर दिया, बहुत से नये तीर्थों की स्था-

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

पना हो गई, और नौवत यहाँ तक पहुँची कि एक दूसरे के तीर्थों पर जबरदस्ती अधिकार किया जाने लगा और लाखों रुपया पानी की तरह बहाकर लन्दन की प्रिंसी कौंसिल में फैमलो की आशा की जाने लगी !

दुर्भाग्य में जैनो के अनेक प्राचीन तीर्थ स्थानों का पता नहीं चलता । इसके सिवाय अष्टापद, श्रावस्ति, मिथिला, पुष्पिताल, मद्रिलपुर, कौशावी अहिच्छत्रा, पुगी, तक्षशिला, वीनिभयपत्तन, द्वागिका आदि अनेक तीर्थ विच्छिन्न हो गये हैं और जैन यात्री प्रायः आजकल इन तीर्थों की यात्रा नहीं करते । इसी तरह गजपथा, ऊन आदि तीर्थों का दिगम्बर भट्टाओं और धनिका ने नवनिर्माण कर डाला है । इन सब बातों का गवेषणापूर्ण अध्ययन होना चाहिए, उसी समय जैन तीर्थों का ठीक-ठीक इतिहास लिखा जा सकता है ।

यद्यपि जैन सूत्रों में पारस (ईरान), जोगुस (यवन), चिल्लात (किरान), अलमण्ड (एलेक्जेंड्रिया) आदि कतिपय अनार्य देशों का उल्लेख आता है, लेकिन मालूम होता है कि आचार-विचार और भक्त्याभक्त्य के नियमों का कड़ाई के कारण बौद्ध श्रमणों की नाई जैन श्रमण भारत के वाह्य धर्मप्रचार के लिए नहीं जा सके । निशीथचूर्णि में आचार्य कालिक के पारस देश में जाने का उल्लेख अवश्य आता है, लेकिन वे धर्म-प्रचार के लिए न जाकर वहाँ उज्जयिनी के राजा गर्दभिल्ल से बदला देने के लिए गए थे ।

२८, शिवाजी पार्क, बम्बई २८

जगदीशचन्द्र जैन

पार्श्वनाथ और उनके शिष्यों का विहार

पहले भगवान महावीर का जैन धर्म का मस्थापक माना जाता था, लेकिन अब विद्वानों की खोज से यह प्रमाणित हो गया है कि महावीर के पूर्व भी जन धर्म व्यवस्थित था।

यद्यपि बौद्ध त्रिपिटका में भगवान पार्श्वनाथ का उल्लेख नहीं आता लेकिन उनके चतुर्थीय भगवत् का उल्लेख पाया जाता है। जैन शास्त्रों के अनुसार पार्श्वनाथ का जन्म वाराणसी* (बनारस) में हुआ था। उनकी माता का नाम वामा और पिता का नाम अश्वसेन था। पार्श्वनाथ ३० वर्ष तक गृहस्थ अवस्था में रहे ७० वर्ष तक उन्होंने साधु जीवन व्यतीत किया, और १०० वर्ष की अवस्था में सम्मोदशिवर (पारमनाथ हिल, हजाराबाग) पर तप करने के पश्चात् निर्वाण पद पाया।

पार्श्वनाथ पुरुषश्रेष्ठ (पुण्यसाधनीय) कहे जाते थे। उनके आठ प्रधान शिष्य (गणधर) थे और उन्होंने साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविकाओं के चतुर्विध सभ की स्थापना की थी। पार्श्वनाथ ने अपने साधु जीवन में साकेत, श्रावस्ति, कौशांबी, राजगृह, आमलकपा, कापिलपुर, अटिच्छत्रा इतिनापुर आदि स्थानों में विहार किया था।

पार्श्वनाथ के श्रमण पार्श्वपत्य (पार्श्वचिज्ज) नाम से पुकारे जाते थे। आचार्यग सत्र में महावीर के माता-पिता को पार्श्वनाथ की परम्परा का

* इस पुस्तक में उल्लिखित तीर्थ स्थानों के विशेष विवरण और उनकी पहचान के हवाला के लिये देखिये लेखक की 'लाइफ इन ऐंशियेट इन्डिया ऐंड टिपिकेटेड इन द जैन कैलन्डर' नामक पुस्तक का पाचवाँ भाग।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

अनुयायी कहा गया है। आवश्यकचूर्णि में पार्श्वनाथ के अनेक श्रमणों का उल्लेख मिलता है जो महावीर की माधु जीवन की चारिका के समय मौजूद थे। उदाहरण के लिये, उत्पल श्रमण ने पार्श्वनाथ की श्रमण परम्परा में दीक्षा ली थी, लेकिन बाद में उन्होंने दीक्षा छोड़ दी और अष्टियगाम में ज्योतिषी बनकर रहने लगे। सोमा और जयन्ती उत्पल की दो बहिनें थीं। इन्होंने भी पार्श्वनाथ की दीक्षा छोड़कर परिव्राजिकाओं की दीक्षा ले ली थी।

पार्श्वनाथ के दूसरे श्रमण स्थविर मुनिचन्द्र थे। ये बहुश्रुत स्थविर अपने शिष्य परिवार के साथ कुमाराय मनिवेश में किसी कुम्हार की शाला में रहते थे। एक बार मर्वालिपुत्र गाशाल जय महावीर के साथ विहार कर रहे थे तो व स्थविर मुनिचन्द्र के पास आये और उन्हें आरम्भ तथा परिग्रह सहित देखकर उन्होंने प्रश्न किया कि आप लोग मारम और सपरिग्रह होकर भी श्रमण निर्ग्रथ कैसे कर सकते हैं? बात यदा तक बढ़ गई कि गोशाल ने उनके निवास-स्थान (प्रतिश्रय) को जला देने की धमकी दी। लेकिन महावीर ने गाशाल को समझाया कि वे लोग पार्श्वनाथ के अनुयायी स्थविर माधु हैं, अतएव उनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। इन स्थविरों के आचार-विचार के सम्बन्ध में कहा गया है कि ये अन्त में तिनकलर वाग्ग करते थे, तथा तप, सत्व, सूत्र, एकत्व और बल नामक पांच भावनाओं में मयुक्त होकर उपाश्रय में, उपाश्रय के वाहर, चोगटो पर, शन्यगृह में और श्मशानों में रहकर तप करते थे।

भगवती सूत्र में वाणियगाम निवासी श्रमण गाणों का उल्लेख आता है, जिन्होंने पार्श्वनाथ का चातुर्थांश धर्म त्याग कर महावीर के पाँच महाव्रत स्वीकार किये। उक्त सूत्र में तुणिय नगरी को पार्श्वनाथ के स्थविरों का केन्द्र-स्थान बताते हुए वहाँ ५०० स्थविरों के विहार करने का उल्लेख है। इन स्थविरों में कालियपुत्र, मेहिल, आनन्दगन्धर्व और कामव के नाम मुख्य हैं।

सूत्रकृतांग में पार्श्वनाथ के अनुयायी मेदार्य गोत्रीय उदक पेढालपुत्र का नाम आता है। महावीर के प्रधान शिष्य गौतम इन्द्रभूति के साथ इनका वाद हुआ और अन्त में इन्होंने महावीर के पास जाकर उनके पाँच महाव्रतों का स्वीकार किया। उत्तराध्ययन सूत्र में चतुर्दश पूर्वधारी कुमारश्रमण केशी का उल्लेख आता है। केशीकुमार अपने ५०० शिष्य-परिवार के साथ श्रावस्ति नगरी में विहार करते थे। यहाँ पर गौतम इन्द्रभूति के साथ इनका वार्तालाप

पार्श्वनाथ और उनके शिष्यों का विहार

हुआ और इन्होंने पार्श्वनाथ का चातुर्वर्ग धर्म छोड़कर महावीर के पाँच महाव्रतों को स्वीकार कर लिया। इस प्रसंग पर गौतम इन्द्रभूति ने केशी-कुमार का समझाया—“पार्श्व और महावीर दोनों महातपस्वियों का उद्देश्य एक है, और दोनों ही ज्ञान, दर्शन और चाग्रि से मोक्ष की मिट्टि मानते हैं। अन्तर्गतना ही है कि पार्श्वनाथ ने अहिंसा, सत्य, अचौर्य और अपभ्रिष्ट—इन चार व्रतों को माना है, जब कि महावीर इन व्रतों में ब्रह्मचर्य व्रत मिलाकर पाँच व्रत स्वीकार करते हैं। इसके अतिरिक्त, पार्श्वनाथ का धर्म मत्तल (मत्तल-मन्तरुत्तर) है, और महावीर अचेल (नग्न) धर्म का मानते हैं, लेकिन वे महामुने, बाहरी वेप ता साधन मात्र हैं, वास्तव में चित्त की शुद्धि में मात्र की प्राप्ति होती है।”

पार्श्वनाथ की श्रमण परम्परा में स्त्रियों का दीक्षित हो सकता था। ज्ञान धर्म कथा और निरग्रन्थ सूत्रों में ऐसी अनेक स्त्रियों के नामाल्लेख आते हैं। पार्श्वनाथ के निस्तुर्गी मध में पुण्यचूला नामक रागिनी मुख्य थी। उनकी एक शिष्या का नाम काली था। मथुरा के जैन शिलालेखों में भी आर्याआ का उल्लेख पाया जाता है।

पार्श्वनाथ और उनके शिष्यों ने विहार और उत्तरप्रदेश के वि० स्थानों में विहार किया था, उन सब स्थानों की गणना भारत के प्राचीनतम जैन तीर्थों में की जानी चाहिए।

महावीर की विहार-चर्या

पार्श्वनाथ के लगभग अट्ठाईसौ वर्ष बाद विदेह की राजधानी वशाली (वसाह, मुजफ्फरपुर) के उपनगर क्षत्रियकुण्डग्राम (कुण्डग्राम अथवा कुण्डपुर आधुनिक बसुकुण्ड) में महावीर का जन्म हुआ था। महावीर की माता का नाम त्रिशला और पिता का नाम सिद्धाथ था। तीस वर्ष की अवस्था में महावीर ने दीक्षा ग्रहण की, बारह वर्ष तप किया और तीस वर्ष तक देश-देशान्तर में विहार किया। तत्पश्चात् बत्तर वर्ष की अवस्था में ई० पू० ५२८ के लगभग मज्झिमपावा (पावापुरी, विहार) में निर्वाण लाभ किया।

प्रथम वर्ष

महावीर वर्षमान में मँगसिर वदी १० के दिन क्षत्रियकुण्डग्राम के बाहर जातुग्वण्ड नामक उद्यान में अशोक वृक्ष के नीचे श्रमण-दीक्षा ग्रहण की और एक मुहूर्त दिन अवशप रहने पर कुम्भारगाम पहुँच कर वे ध्यान में अवस्थित हो गए। दूसरे दिन महावीर कोल्लाक मानवेश पहुँचे और वहाँ से मारग मनिवेश पहुँच कर दुट्ठजत नाम के तापस आश्रम में रुक गए। एक रात रुक कर उन्होंने वहाँ से विहार किया और आठ महीने तक घूम-फिरकर वे फिर इसा स्थान में आए। यहाँ पन्द्रह दिन रह कर महावीर अट्ठियगाम चले गए जहाँ उन्हें शून्तशणि वृक्ष ने उतरग किया। यहाँ महावीर चार महीने रहे। यह उनका प्रथम चतुर्मास था।

दूसरा वर्ष

शरद ऋतु आने पर महावीर यहाँ से मारग मनिवेश गए। वहाँ से उन्होंने वाचाला की तरफ विहार किया। वाचाला दक्षिण और उत्तर भागों में विभक्त

म० महावीर द्वारा अवलोकित

स्थान [५०० ई० पू०]



महावीर की बिहार-चर्या

यी । दोना क रीच मे सुवर्णकला और रूपकला नामक नदियो बहती थी । महावीर ने उन्निग वाचाला मे उत्तर वाचाला की ओर प्रस्थान किया । उत्तर वाचाला जाने हुए रीच मे कनकखल नाम का आश्रम पड़ता था । यहाँ से महावीर सेर्याविया नगरी पहुँचे, जहाँ प्रदेशी राजा ने उनका आदर-सत्कार किया । तत्पश्चात् गंगा नदी पार कर महावीर सुरभिपुर पहुँचे और वहाँ से थूणाक सनिवेश पहुँचे कर ध्यान मे अवस्थित हो गए । यहाँ से महावीर गत-गृह गए और उसक बाद नालन्दा के बाहर किसी जुलाहे की शाला मे ध्यानावस्थित हो गए । संयोगवश मन्वलिपुत्र गोशाल भी उस समय यहाँ टहरे हुआ था । महावीर के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह उनका शिष्य बन गया । यहाँ से चल कर दोना कोल्लाग सनिवेश पहुँचे । महावीर ने यहाँ दूसरा वानुर्मास बिताया ।

तीसरा वर्ष

तत्पश्चात् महावीर और गोशाल सुवन्तखल्य पहुँचे । वहाँ से वादगन-ग्राम गये । यहाँ नन्द और उपनन्द नामक दो भाई रहते थे और दोना क अलग अलग मोक्ष थे । गुरु-शिष्य यहाँ से चलकर चला पहुँचे । भगवान ने यहाँ तीसरा वानुर्मास व्यतीत किया ।

चौथा वर्ष

तत्पश्चात् दोना शालाय सनिवेश जाकर एक शून्यगृह मे टहरे । यहाँ से पत्तकालय गये, और वहाँ से कुमारगय सनिवेश जाकर चपरमणिज नामक उद्यान मे ध्यानावस्थित हो गये । यहाँ पार्श्वपत्य म्यावर मुनिचन्द्र टहरे हुए थे जिनके विषय मे ऊपर कहा जा चुका है । यहाँ से चलकर दोना चोगग सनिवेश पहुँचे, लेकिन यहाँ गुप्तचर समझकर दोना पकड़ लिये गये । यहाँ से दोना ने वृष्टचरा के लिए प्रस्थान किया । महावीर ने यहाँ चौथा चोमासा बिताया ।

पाँचवाँ वर्ष

पारगा के बाद महावीर और गोशाल यहाँ से कयमला के लिए रवाना हुए । वहाँ से श्रावस्त पहुँचे, फिर हलेदय गये । फिर दोना नङ्गलाग्राम पहुँचे

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

कर वासुदेव के मन्दिर में ध्यान में लीन हो गये। तत्पश्चात् दोनों आवात्ता-ग्राम जाकर बलदेव मन्दिर में ठहरे। यहाँ से दोनों चोगाय सनिवेश पहुँचे, फिर कलबुद्ध सनिवेश आये। यहाँ दोनों कैद कर लिए गये। तत्पश्चात् गुरु-शिष्य लाट देश की ओर चले। लाट देश वज्रभूमि और सुवर्णभूमि नामक दो भागों में विभक्त था। उस देश में गाँवों की संख्या बहुत कम थी, और बहुत दूर चलने पर भी वसति (निवास स्थान) मिलना कठिन होता था। यहाँ के निवासी रुद्ध भोजन करने के कारण प्रकृति में कारी होते थे। ये लोग साधुओं से द्वेष करते थे, उन्हें कुत्ता से कटवाते थे, और उन पर दण्ड आदि से प्रहार करते थे। ये लोग यतिया का ऊपर से उठाकर नीचे पटक देते, तथा उनके गोदाहन, उँकड़ और धीर आदि श्रामणों से गिराकर उन्हें मारते थे। कपाम आदि के अभाव में यहाँ के लोग तृण खाते थे। लाट देश में महावीर और गोशाल ने अनेक प्रकार के कष्ट सहनकर छह मास बिहार किया। इस देश में बौद्ध साधु कुत्ता के उपद्रव से बचने के लिए अपनी देह के राखर चार अंगुल माटी लाठी लेकर चलते थे, लेकिन महावीर ने यहाँ बिना किसी लाठी आदि के भ्रमण किया। तत्पश्चात् दोनों पुनःकलस होते हुए माण्ड्य नगरी लौट आये। महावीर ने यहाँ पाँचवाँ चातुर्मास बिताया।

छठा वर्ष

तत्पश्चात् दोनों कर्णलीग्राम, जवूमड और तवाय सनिवेश होते हुए कृषि सनिवेश पहुँचे। यहाँ उन्हें गुमचर समझ कर पकड़ लिया गया। उसके बाद दोनों वैशाली आये। यहाँ आकर गोशाल ने महावीर से कहा कि जब मुझ पर कोई आपत्ति आती है तो आप मेरी सहायता नहीं करते। यह कह कर गोशाल महावीर का साथ छोड़कर चला गया। महावीर वैशाली में गामाय सनिवेश होते हुए साल्मस्य ग्राम पहुँचे। यहाँ उन्हें कटपतना जगतरी ने अनेक कष्ट दिए। कुछ समय बाद गोशाल फिर महावीर के पास आ गया। दोनों सहित पहुँचे। महावीर ने यहाँ छठा वर्षावास व्यतीत किया।

सातवाँ वर्ष

तत्पश्चात् गुरु-शिष्य ने मगध देश में बिहार किया। यहाँ आलमिया नगरी में महावीर ने सातवाँ वर्षावास व्यतीत किया।

महावीर की बिहार-चर्या

आठवाँ वर्ष

इसके बाद दोनों कुंडाग सनिवेश चाकर वासुदेव के मन्दिर में ध्यान में अवस्थित हो गये। यहाँ से महणा ग्राम पहुँचकर बलदेव के मन्दिर में ठहरे। वहाँ से बहुमालग ग्राम पहुँचे यहाँ मालजा व्यन्तरी ने उपसर्ग किया। तत्पश्चात् दाना ने लोहमाल राजधानी की ओर प्रस्थान किया। यहाँ उन्हें राज-पुरुष ने गुप्तचर समझकर पकड़ लिया। यहाँ से दोनों पुरिमताल पहुँचे और शकटमुख उद्यान में नानावस्थित हो गये। यहाँ से दोनों ने उल्लाट की ओर प्रस्थान किया, और वहाँ से गोभूमि पहुँचे। तत्पश्चात् दोनों राजगृह आये। यहाँ महावीर ने आठवाँ चातुर्मास व्यतीत किया।

नौवाँ वर्ष

गोशाल का साथ लेकर महावीर ने फिर से लाट देश की यात्रा की, और यहाँ वज्रभूमि और गुप्तभूमि में विचरण किया। अब की बार महावीर यहाँ कुछ महीने तक रहे और उन्होंने अनेक प्रकार के कष्ट सहन करते हुए यहाँ चातुर्मास व्यतीत किया।

दसवाँ वर्ष

तत्पश्चात् महावीर और गोशाल मिद्रत्थपुर आये। यहाँ से दोनों तब कुम्भगाम जा रहे थे तो जगल में एक तिल के पौधे को देखकर गोशाल ने प्रश्न किया कि वह पौधा नष्ट हो जायगा या नहीं? महावीर ने उत्तर दिया कि पौधा नष्ट हो जायगा, लेकिन उसका बीज फिर पौधे के रूप में परिणत होगा। कुम्भगाम में वैश्यायन नामक बाल तपस्वी को तप करते देखकर गोशाल ने प्रश्न—“तुम मुनि हो या ज्ञानी का शय्या?”

इस पर वैश्यायन ने क्रुद्ध होकर गोशाल पर तेजोलेश्या छोड़ी। महावीर ने शीतलेश्या का प्रयोग कर गोशाल को बचाया। इसके बाद कुम्भगाम में मिद्रत्थपुर लौटते हुए महावीर के कथनानुसार जब गोशाल ने उगे हुए तिल के पौधे को देखा तो वह नियतिवादी हो गया और महावीर से अलग होकर श्रावस्ति में किसी कुम्हार की शाला में आकर महावीर द्वारा प्रतिपादित तेजोलेश्या की मिट्टि के लिये प्रयत्न करने लगा। महावीर ने वैशाली के लिये प्रस्थान किया और नाव से गण्डकी नदी पार कर वाणियगाम पहुँचे। यहाँ से श्रावस्ति पहुँच कर महावीर ने दसवाँ चौमासा व्यतीत किया।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

ग्यारहवाँ वर्ष

तत्पश्चात् महावीर ने मानुलडियगाम की ओर प्रस्थान किया। वहाँ से वे ददभूमि गये और पेढाल उग्रान में पोलास नामक चैत्य में ठहरें। यहाँ बहुत से भलेच्छु रहते थे। उन्होंने महावीर का अनेक कष्ट दिये। इसके बाद वे बालुयागाम, सुभोम, मुच्छेत्ता और मलय होते हुए हाथिमीम पहुँचे। इन स्थानों में महावीर ने अनेक उपसर्ग महे। तत्पश्चात् महावीर ने तोमाल के लिये प्रस्थान किया। वहाँ से वे मोमाल गये, फिर लाट कर नामलि आये। वहाँ से मिद्धत्थपुर होते हुए वयसगाम आये। महावीर ने इस प्रदेश में छह महीने विचरण किया। इन स्थानों में महावीर का बार उपसर्ग महन करने पड़े। इसके बाद महावीर आलभिया पहुँचे और फिर सेयविया होते हुए उन्होंने श्रावस्ति की ओर विहार किया। उस समय श्रावस्ति में स्कन्द (कालिकेय) की पूजा होती थी। वहाँ से महावीर कौशावी, वागगभी, रागुह और मिथिला में विचरण करते हुए वैशाली पहुँचे और यहाँ उन्होंने ग्यारहवाँ चौरमासा बिताया। (कुछ लोगों का कहना है कि यह चातुर्मास महावीर ने मीथिला में बिताया।)

बारहवाँ वर्ष

यहाँ से महावीर ने सुसुमारपुर के लिए प्रयाण किया। फिर मासपुर नन्दिगाम और मेढियगाम होते हुए कौशावी पवारे। यहाँ उन्हें भ्रमण करने करते चार मस बात गये लेकिन आहार-लाभ न हुआ। अन्त में चम्पा के राजा दशियाहन की पुत्री चन्दनवाला ने उन्हें आहार देकर भुगत्य लाभ किया। तत्पश्चात् महावीर सुमदलगाम और पालय होते हुए चम्पा पवारे और यहाँ किसी ब्राह्मण की यज्ञशाला में ठहर। महावीर ने यहाँ बारहवाँ वर्षावास बिताया।

तेरहवाँ वर्ष

तत्पश्चात् महावीर जमियगाम पहुँचे। वहाँ से मेढियगाम होते हुए माज्जमपावा आये। यहाँ से लौट कर फिर जमियगाम गये और यहाँ नगर के बाहर विद्यावत्त चैत्य में ऋजुवालिका नदी के उत्तरी किनारे श्यामाक गृहपति के खेत में शाल वृक्ष के नीचे वैशाख सुदी १० के दिन केवलजान प्राप्त किया।

महावीर की विहार-चर्या

उसके बाद महावीर ने ३० वर्ष तक देश-देशान्तर में विहार करते हुए अपने उपदेशामृत में जन-समुदाय का कल्याण करने हुए अपने मित्रान्तों का पचार किया। अन्त में वे मज्झिमपावा पवार और यहा चातुसम व्यतीत करने के लिये हस्तिनाल नामक गणराजा के पटवारी के दफ्तर (रज्जुगमभा) में ठहरा। एक एक करके वर्षाकाल के तीन मर्दान बीत गये। चौथा मर्दान लगभग आधा बीतने का आया। इस समय कार्तिकी अमावस्या के प्रातः काल महावीर ने निर्वाण लाभ किया। महावीर के निर्वाण के समय काशी, जाल के नौ मल्ल और नौ लिच्छवि नामक अठारह गणराजा मौजूद थे। उन्होंने इस पण्य अवसर पर सर्वत्र दीपक जलाकर महान उत्सव मनाया।

महावीर वर्धमान ने विहार, बंगाल और पूर्वीय उत्तरप्रदेश के जिन स्थानों को अपने विहार में विचर किया था वे सब स्थान जनों के पुरातन नाथ हैं। दुर्भाग्य से आज इन स्थानों में से बहुत कम स्थानों का ठीक ठीक पता लगता है। बहुत से तो भिल्ल अटारह हजार वर्षों से नाम शेष रह गये हैं। यदि विहार, बङ्गाल और उत्तरप्रदेश के उत्त प्रदेशों की पंडल यात्रा की जाय तो निम्नान्देश यात्रियों को अत्यंत पुण्य का लाभ हो और इसमें समस्त बहुत से अज्ञान पवित्र स्थानों का पता चल जाय।

जैन श्रमण-संघ और जैन धर्म का प्रसार

बृहत्कल्प सूत्र और निशीथ सूत्र जैसे प्राचीन जैन सूत्रों से पता लगता है कि भगवान् महावीर जब माकेत नगरी के सुभूमिभाग नामक उद्यान में विहार कर रहे थे तो उन्होंने निम्नलिखित सूत्र कहा था—

“निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थिनी माकेत के पूर्व में अङ्क-मगध तक, दक्षिण में कौशावी तक, पश्चिम में स्थूणा तक, तथा उत्तर में कुणाला (उत्तर कोमल) तक विहार कर सकते हैं । इतने ही क्षेत्र आर्य क्षेत्र हैं, बाकी नहीं, क्योंकि इन्हीं क्षेत्रों में निर्ग्रन्थ भिक्षु और भिक्षुाणियों के ज्ञान-दर्शन और चारित्र अक्षुण्ण रह सकते हैं ।”

इससे पता लगता है कि आरम्भ में जैन श्रमणों का विहार-क्षेत्र आधुनिक बिहार, पूर्वीय उत्तरप्रदेश तथा पश्चिमीय उत्तरप्रदेश के कुछ भाग तक सीमित था, इसके बाहर वे नहीं गये थे ।

बृहत्कल्प भाष्य में जनपद-परीक्षा प्रकरण में बताया गया है कि जनपद-विहार करने से साधुओं की दर्शन-विशुद्धि होती है, महान् आचार्य आदि की मगति से वे अपने आपका धर्म में स्थिर रख सकते हैं, तथा विद्या-मन्त्र आदि की प्राप्ति कर सकते हैं । यहाँ बताया गया है कि साधु को नाना देशों की भाषाओं में कुशल होना चाहिए जिससे वह देश-देश के लोगों को उनकी भाषा में उपदेश दे सके । इतना ही नहीं, साधु को इस बात की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए कि किस देश में किस प्रकार से धान्य की उत्पत्ति होती है—कहाँ वर्षा से धान्य होते हैं, कहाँ नदी के पानी से होते हैं, कहाँ तालाब के

जैन श्रमण-संघ और जैन धर्म का प्रसार

पानी से होते हैं, कहाँ कुँए के पानी से होते हैं, कहाँ नदी की बाढ़ से होते हैं और कहाँ नाव में रोपे जाते हैं। इसी प्रकार साधु को यह जानना आवश्यक है कि किस देश में व्यापार-वणिज से आजीविका चलती है, कहाँ खेती से आजीविका होती है, तथा कहाँ के लोग मान-भक्ती होते हैं और कहाँ निरामिष-भोजी।

कहना न होगा कि जैन श्रमणों ने भयङ्कर कष्टों का सामना कर अपने सिद्धान्तों का प्रसार किया था। उस समय मार्ग में भयानक जङ्गल पड़ते थे, जो हिंस्र जंतुओं से परिपूर्ण थे। रास्ते में बड़े बड़े पर्वत और नदी-नालों को, लांघ कर जाना पड़ता था। चोर-डाकुओं के उपद्रव और राज्योंपद्रव भी कम नहीं थे। वसति (ठहरने की जगह) तथा दुर्मिच्छ-जन्य उपद्रवों की भी कमी नहीं थी। ऐसी दशा में देश-देशान्तर में घूम-घूमकर अपने धर्म का प्रचार करना साधारण बात न था।

लेकिन कुछ समय पश्चात् जैन श्रमणों का राजा सम्प्रति (२२०-२११ ई. पू.) का आश्रय मिला और जैन भिक्षु बिहार, बङ्गाल और उत्तरप्रदेश की सीमा का उल्लङ्घन कर दूर दूर तक विहार करने लगे। जैन सूत्रों के अनुसार राजा सम्प्रति नेत्रहीन कुणाल का पुत्र था, जो सम्राट् चन्द्रगुप्त (३२५-३०२ ई. पू.) का प्रपौत्र, बिन्दुसार का पौत्र तथा अशोक (२७६-२३७ ई० पू०) का पुत्र था। अश्वत्थि का राजा सम्प्रति आर्य सुहस्ति के उपदेश से जैन श्रमणों का उपासक और जैन धर्म का प्रभावक बना था। राजा सम्प्रति ने नगर के चारों दरवाजों पर दानशालाएँ खुलवाकर जैन श्रमणों को भोजन-वस्त्र देने की व्यवस्था की थी। उसने अपने आधीन आसपास के सामन्त राजाओं को निमन्त्रित कर उन्हें श्रमण मध की भक्ति करने को कहा। सम्प्रति अपने कर्मचारियों के साथ रथयात्रा महोत्सव में सम्मिलित होता और रथ के सामने विविध पुष्प, फल, वस्त्र, कौडियों आदि चढ़ाकर अपने को धन्य मानता था। राजा सम्प्रति ने अपने भटों को शिक्षा देकर साधुवेष में सामन्त देशों में भेजा, जिससे जैन श्रमणों को निर्दोष भिक्षा का लाभ हो सके। इस प्रकार सम्प्रति ने आन्ध्र, द्रविड, महाराष्ट्र, कुडुक (कुर्ग) आदि देशों को जैन श्रमणों के सुख-पूर्वक विहार करने योग्य बनाया।

इस समय से निम्नलिखित साढ़े पच्चीस देश आर्य देश माने जाने लगे, और इन देशों में जैन श्रमणों का विहार होने लगा —

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

जनपद	राजधानी
१ मगध	गजग्रह
२ अङ्ग	चम्पा
३ वज्ज	ताम्रलिनि
४ कलिङ्ग	काचनपुर
५ काशी	वागगर्भी
६ कौशल	माकेत
७ कुरु	गजपुर
८ कुशावर्त	शौरिपुर
९ पाचाल	काम्पिल्यपुर
१० जाङ्गल	अहिच्छवा
११ मौर्याट्ट	ढागवती
१२ विदेह	मिथिला
१३ वत्स	कौशाबी
१४ शाटिल्य	नन्दिपुर
१५ मलय	भद्रिलपुर
१६ मत्स्य	वैराट
१७ वरगा	अच्छा
१८ दशार्ण	मृत्तिकावती
१९ चेदि	शुक्तिमती
२० मिन्धु-मौर्या	वातिभय
२१ शूरसेन	मथुरा
२२ मगि	पापा
२३ वट्टा (?)	मानपुरी (?)
२४ कुणाल	श्रावस्ति
२५ लाट्ट	कोटिवर्ष
२५½ केकयी अर्ध	श्वेतिका

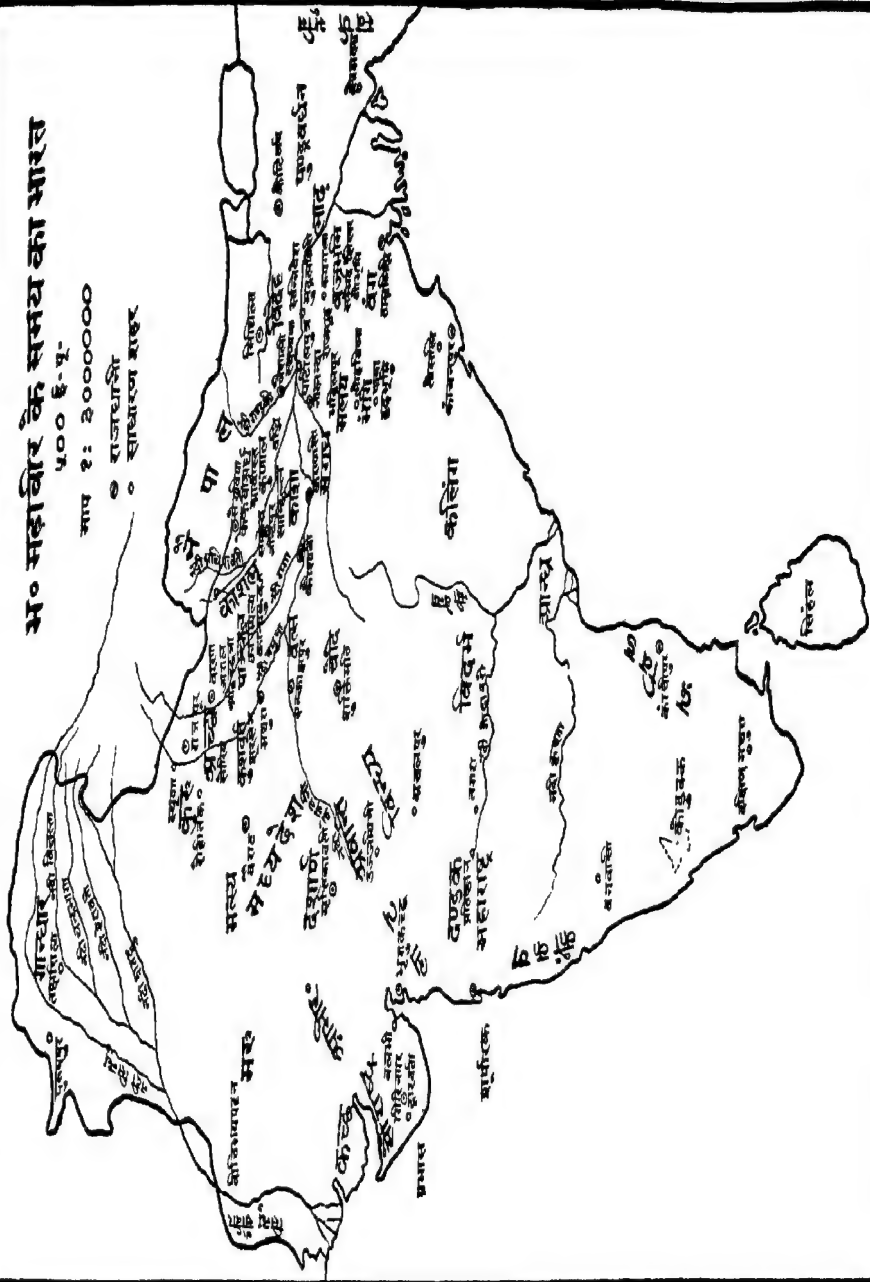
कल्पसूत्र में उल्लिखित स्थविरावलि में जो जैन श्रमणों के निम्नलिखित गण, शाग्या और कुला का उल्लेख मिलता है, उससे भी पता चलता है कि

भ० महावीर के समय का भारत

५०० ई-पू-

आप १: २००००००

० राजधानी
० साधारण शहर



जैन भ्रमण-संघ और जैन धर्म का प्रसार

ईसवी सन के पूर्व जैन भ्रमणों की प्रवृत्तियों का केन्द्र काफी विस्तृत हो गया था :—

गोदाम गण की शाखाएँ:—नामलित्तिया, कोडिवरिसिया, पुडवद्वयिया, दामी ग्वब्बडिया ।

उत्तर बलिस्मह गण की शाखाएँ:—कामबिया, मोहत्तिया (सुत्तवत्तिया), कोडिवर्या, चन्दनागरी ।

उद्देह गण की शाखाएँ:—उदवरिजिया, मामपुरिया, महवनिया, पुण्ण-पत्तिया ।

कुल:—नामभूय, मामभूय, उल्लगच्छ, हत्थलिज, नदिज, पारिहामय ।

चागण गण की शाखाएँ:—हारियमालागरी (हारियमालगदी) सका-मीश्रा, गवेधुया, नजन रा ।

कुल:—वच्छलिज, पीडधम्मिअ, हालिज, पूममत्तिज, मालिज, अजवेडय, कण्हमह ।

उडुवाटिय गण की शाखाएँ:—चपिजिया, भद्रिजिया, काकनिय, मेह-लिजिया ।

कुल:—महत्रमिय, महगुत्तिय, जममह ।

वमवडिय गण की शाखाएँ:—मावत्थिया, रजगलिया, अतरिजिया, खेम-लिजिया ।

कुल —मेहिय, कामिडिहअ, हदपुग ।

माग्व गण की शाखाएँ:—कामवजिया, गायमजिया, वामिट्टिया, मागट्टिया ।

कुल —इमिगुत्ति, इमिदत्तिय, अभिजयन्त ।

कोडिय गण की शाखाएँ:—उच्चानागरी, विजाहरी, वइरी, मज्झिमिल्ला* ।

कुल:—बभलिज, वच्छलिज, वाणिज, पण्हवाहण्य* ।

इसके अतिरिक्त मज्झिमा, विजाहरी, उच्चानगरी, अजसेणिया, अजतावर्सी, अजकुबेरी, अजइमिपालिया, बभदीविया, अजवइरी, अजनाइली, अज-जयन्ती नामक शाखाओं का उल्लेख मिलता है । ध्यान रखने की बात है कि

* ध्यान रखने की बात है कि विक्रम संवत् १८०५ में प्रयन्धकांश के रच-यिता राजशेखर ने ग्रंथ की प्रशस्ति में अपने आपको कोटिक गण, प्रभववाहनक कुल, मध्यमा शाखा, हर्षपुरीय गच्छ और मलभारि सन्तान बताया है ।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

मथुरा के शिलालेखों में भी ये ही गण, शाखाय और कुल उत्कीर्ण हैं।

दुर्भाग्य से इनमें अधिकतर नामों का ठीक ठीक पता नहीं चलता, किन्तु जिनका पता चलता है उसमें स्पष्ट है कि जैन श्रमणों ने ईसवी सन के पूर्व ताम्रलिति, कोटिवर्ष, पारङ्गुवर्धन, कौशाबी, शुक्तिमती, उदुम्बर, मापपुरी (१) चम्पा, काकन्दी, मिथिला, श्रावस्ति, अन्तर्गङ्गा, कोमिला, उच्चानागरी, मध्यमिका और ब्रह्मद्वीप आदि स्थानों में विहार कर उन प्रदेशों को अपनी प्रवृत्तियों का केन्द्र बनाया था। इन सब क्षेत्रों का जैनधर्म के पवित्र तीर्थ मानना चाहिए।

बिहार - नेपाल - उड़ीसा - बंगाल - बर्मा

१—बिहार

ईसा के पूर्व चौथी शताब्दि में लेकर ईसवी सन की पौचवीं शताब्दि तक बिहार एक समृद्धिशाली प्रदेश था और उस समय यहाँ का कला-कौशल उन्नति के शिखर पर पहुँचा हुआ था। यहाँ के शासकों ने जगह-जगह मड़के बनवाई थी, तथा जावा, बालि आदि सुदूरवर्ती द्वीपों में जहाजों के डेडे भेजकर इन द्वीपों को बसाया था।

बिहार प्रान्त में जो प्राचीन खण्डहर और मूर्तियों उपलब्ध हुई हैं उसमें पता चलता है कि यह स्थान ईसा के पूर्व छठी शताब्दि में बौद्ध तथा जैनो का बड़ा मार्ग केन्द्र था। सम्राट् अशोक ने बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिये यहाँ से लङ्का, चीन, तिब्बत आदि सुदूर स्थानों में उपदेशक भेजे थे।

जैन और बौद्ध ग्रन्थों में **मगध** देश (दक्षिण बिहार) की गणना प्राचीन १६ जनपदों* में की गई है। यह देश पूर्व दिशा का पुनीत तीर्थ माना जाता था और यहाँ का जल पवित्र समझा जाता था। मगध की भाषा मागधी थी जिसमें महावीर और बुद्ध ने प्रवचन किया था।

* अङ्ग, वङ्ग, मगध, मल्ल, मालव, अच्छ, वच्छ, कोच्छ, पाद, लाट, वज्जि, मोलि, कामी, कोमल, अवाह, समुत्तर (सुम्होत्तर) — भगवती १५। तुलना कर—अग, मगध, कामी, कोमल, वज्जि, मल्ल, चेति, वस, कुरु, पचाल, मच्छ, सूस्मेन, अस्मक, अवन्ति, गंधार, कम्बोज—अगुत्तर निकाय १, पृ. २१३.

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

मगध का दूसरा नाम कीकट था। ब्राह्मण ग्रन्थों में मगध को पापभूमि बताते हुए वहाँ गमन करना निषिद्ध माना गया है। इस पर १८वीं सदी के एक जैन यात्री ने व्यंगपूर्वक लिखा है—यह कितने आश्चर्य की बात है कि यदि हाशी में एक कौवा भी मर जाय तो वह सीधे मोक्ष में पहुँच जाता है, लेकिन यदि कोई मनुष्य मगधभूमि में मरे तो वह गधे की योनि में पैदा होता है। जैन ग्रन्थों में मगधवासियों की बहुत प्रशंसा की है और कहा है कि वहाँ के लोग मकेत मात्र से बान को समझ जाते हैं।

शिशुनागवशी सम्राट विविमर (श्रेणिक) मगध में राज्य करता था। कर्णिक (अज्ञातशत्रु, मृत्युकाल ५२५ ई. पू.), अभयकुमार और मेघकुमार आदि उसके अनेक पुत्र थे।

मगध की राजधानी राजग्रह (राजसिर) थी। राजग्रह की गणना भारत का दस राजधानियाँ में की गई है।* मगध देश का मुख्य नगर होने से राजग्रह को मगधपुर भी कहा जाता था। जैन ग्रन्थों में इसे क्षितिप्रतिष्ठित, चणकपुर, ऋषभपुर और कुशाग्रपुर नाम से भी कहा गया है। कहा जाता है कि कुशाग्रपुर में प्रायः आग लग जाया करती थी। अतएव मगध के राजा विविमर ने उसके स्थान पर राजग्रह नगर बनाया।

महाभारत के अनुसार, राजग्रह में राजा जगन्मथ राज्य करता था। यहाँ स महावीर के अनेक शिष्यों का मोक्ष-गमन बताया जाता है। राजग्रह प्रभाष गणधर और दशवैकालिक के कर्ता शय्यभग्न का जन्मस्थान था। महावीर का केवलज्ञान होने के सोलह वर्ष पश्चात् यहाँ दूसरे निह्व की स्थापना हुई थी।

पाँच पहाड़ियों से घिरे रहने के कारण राजग्रह को गिरिव्रज भी कहा जाता था। इन पाँच पहाड़ियों के नाम हैं—विपुल, रत्न, उदय, स्वर्ण और वैभार। ये पहाड़ियाँ आजकल भी राजग्रह में मौजूद हैं और जैनोँ द्वारा पवित्र मानी जाती हैं। इनमें वैभार और विपुल गिरि का जैन ग्रन्थों में विशेष महत्व बताया

— — — — —

* चम्पा, मथुरा, वाराणसी, श्रावस्ति, साकेत, काशिल्य, कौशाबी, मिथिला, रम्तिनापुर, राजग्रह—स्थानाग १०.७१७ निशीथ सूत्र ६.१६। तुलना करो—चम्पा, राजग्रह, श्रावस्ति, साकेत, कौशाबी, वाराणसी—दीधनिकाय, महामुदस्सन सुत्त।

बिहार - नेपाल - उड़ीसा - बंगाल - बरमा

गया है। वैभार का वर्णन करते हुए कहा है कि यह पहाड़ी बहुत चित्ताकर्षक थी, अनेक वृक्ष और लताओं से मंडित थी, नाना प्रकार के फल-फूल यहाँ मिलते थे, और नगरवासी यहाँ क्रीड़ा के लिए जाते थे। विपुलाचल से अनेक जैन मुनियों के मोक्ष-गमन का उल्लेख मिलता है। बौद्ध ग्रन्थों से पता लगता है कि विपुलाचल सब पहाड़ियों में ऊँचा था, और यह प्राचीनवश, वक्रक तथा सुपश्य नाम से प्रख्यात था।

वैभार पर्वत के नीचे तथादा अथवा महातपोतीरप्रभ नामक गरम पानी का बड़ा कुण्ड था। जैन सूत्रों में इस कुण्ड की लम्बाई पाँच सौ धनुष बताई गई है। राजगीर में आजकल भी गरम पानी के स्रोत मौजूद हैं, जिन्हें तपोवन के नाम से पुकारा जाता है। मातवी नदी के चोटी यात्री हुआन-सांग ने अपने विवरण में इनका उल्लेख किया है।

बुद्ध और शार्ङ्ग ने राजगृह में अनेक चातुस्रम व्यतीत किये थे। जैन ग्रन्थों के अनुसार यहाँ गुणसिल, मडिकुच्छ, मासगपाणि आदि चैत्य—मन्दिर थे। महावीर प्रायः गुणसिल चैत्य में टहलते थे। वर्तमान गुणावा, जिनवादा स्टेशन में लगभग तीन मील दूर है, प्राचीन गुणसिल माना जाता है।

राजगृह व्यापार का बड़ा केन्द्र था। यहाँ दूर-दूर के व्यापारी माल खरीदने आते थे। यहाँ में तक्षशिला, प्रतिष्ठान, कपिलवस्तु, कुशीनारा आदि भारत के प्रसिद्ध नगरों को जाने के मार्ग बने हुए थे। बौद्ध सूत्रों में मगध में धान के सुन्दर खेतों का उल्लेख आता है।

बुद्ध-निर्वाण के पश्चात् राजगृह की अवनीत हार्ती चली गई। जब चीनी यात्री हुआन-सांग यहाँ आया तो यह नगरी अपनी शोभा खो चुकी थी। चोद-हर्षा नदी के विद्वान जिनप्रभ सूरि के समय राजगृह में ३६,००० घरों के होने का उल्लेख है, जिनमें आधे घर बौद्धों के थे।

वर्तमान राजगीर, जो बिहार शरीफ से दक्षिण की ओर १३-१४ मील के फासले पर है, प्राचीन राजगृह माना जाता है।

पाटलिपुत्र (पटना) मगध देश की दूसरी राजधानी थी। पाटलिपुत्र कुसुमपुर, पुष्यपुर और पुष्यभद्र के नाम से भी पुकारा जाता था।

कहते हैं कि राजा अजातशत्रु (कृष्णिक) के मर जान पर राजकुमार उदायि (मृत्यु ४६७ ई० पू०) को चम्पा में रहना अच्छा न लगा। उसने अपने

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

मन्त्रियों को किर्मी योग्य स्थान की तलाश करने भेजा, और यहाँ एक सुन्दर पाटलि का वृक्ष देखकर पाटलिपुत्र नगर बसाया। बौद्धों के महावग्ग के अनु-सार, अजातशत्रु के मन्त्री मुनीध और वर्षकार ने वैशालिनिवासी वज्रियों के आक्रमण से बचने के लिए इस नगर को बसाया था।

पाटलिपुत्र की गणना मित्रक्षेत्रा में की गई है। पाटलिपुत्र जैन साधुओं का केन्द्र था। यहाँ जैन आगमों के उद्धार के लिए जैन श्रमणों का प्रथम सम्मेलन हुआ था, जो पाटलिपुत्र-वाचना के नाम से प्रसिद्ध है। राजा उदायि ने यहाँ जैन मन्दिर बनवाया था। पाटलिपुत्र में शकटार मन्त्री के पुत्र मुनि स्थूलभद्र कोशा गणिका के घर रहे थे और उन्होंने धर्मोपदेश देकर उसे आविका बनाया था। इस नगर में भद्रबाहु, आर्य महागिरि, आर्य सुहस्ति, वज्रस्वामी और उमास्वति वाचक ने विहार किया था। यूनानी यात्री मेगस्थनीज ने पाटलिपुत्र के सम्राट् अशोक के राजभवन का वर्णन किया है। फाहियान के समय ईसा की पाँचवीं शताब्दि तक यह भवन विद्यमान था।

पाटलिपुत्र गंगा के किनारे बसा था। यह नगर व्यापार का बड़ा केन्द्र था। पाटलिपुत्र और सुवर्णभूमि (बर्मा) में व्यापार होता था। जब हुआन-सांग यहाँ आया तो यह नगर एक साधारण गाँव के रूप में विद्यमान था।

नालन्दा राजगृह के उत्तर-पूर्व में अवस्थित था। बौद्ध सूत्रों में राजगृह और नालन्दा के बीच में एक योजन का अन्तर बताया गया है। बीच में अम्बलद्विका नामक वन पड़ता था। प्राचीन काल में नालन्दा बड़ा समृद्धिशाली नगर था, जो अनेक भवन और याग-वर्गीयों से मण्डित था। भिक्षुओं को यहाँ यथेच्छ भिक्षा मिलती थी। बुद्ध, महावीर और गोशाल ने नालन्दा में विहार किया था।

नालन्दा के उत्तर-पश्चिम में समदविया नाम की एक प्याऊ (उदकशाला) थी, जिसके उत्तर-पश्चिम में हस्तिद्वीप नाम का उपवन था। यहाँ महावीर के प्रधान गणधर गौतम ने सूत्रकृताग नामक जैन सूत्र के अन्तर्गत नालन्दीय नामक अध्ययन की रचना की थी।

१३वीं सदी तक नालन्दा बौद्ध विद्या का महान् केन्द्र था। चीन, जापान, तिब्बत, लङ्का आदि से विद्यार्थी यहाँ विद्याध्ययन के लिये आते थे। चीनी यात्री हुआन-सांग ने यहाँ रह कर विद्या पढ़ी थी। बौद्धों के यहाँ अनेक विहार थे। नालन्दा में अनेक चित्रकार और शिल्पी रहते थे। नेपाल और बर्मा के

बिहार - नेपाल - उड़ीसा - बंगाल - बरमा

साथ इस नगर का घनिष्ठ सम्बन्ध था।

राजगिर से ७ मील दूरी पर अवस्थित बड़ागाँव को प्राचीन नालन्दा माना जाता है।

उदण्डपुर अथवा दण्डपुर का उल्लेख जैनसूत्रों में आता है। मगधलिपुत्र गोशाल ने यहाँ विहार किया था। महाभारत में भी इस नगर का उल्लेख किया गया है। कहते हैं यहाँ बहुत से दण्डी साधु रहते थे, इसलिये इस स्थान का नाम दण्डपुर पड़ा। दण्डपुर को पहचान बिहार शरीफ में की जाती है।

तुङ्गिया नगरी में अनेक श्रमणोंपासकों के रहने का उल्लेख आता है। कल्पसूत्र में तुङ्गिका नामक जैन श्रमणों के गण का उल्लेख मिलता है, इसमें मालूम होता है कि यह नगर जैन श्रमणों का केन्द्र रहा होगा। १८वीं सदी के जैन यात्री बिहार शरीफ को प्राचीन तुङ्गिया मानते हैं। बिहार में ४ मील पर तुङ्गियागाम ही सम्भवतः प्राचीन तुङ्गिया हो सकता है।

पावा अथवा मध्यम पावा में महावीर ने निर्वाण लाभ किया था। जम्भियगाम से लौट कर उन्होंने यहाँ महासन उद्यान में अन्तिम चामामा व्यतीत किया। जम्भियगाम* और पावा के बीच बागह योजना का फामला था।

जिनप्रभ सूरि के कथनानुसार महावीर के निर्वाणपद पाने के पूर्व वह नगरी अपावा कही जाती थी, बाद में इसका नाम पावा हो गया।

दिवाली पर यहाँ बड़ा मेला लगता है, जिसमें जैन यात्री दूर-दूर से आते हैं। यहाँ जलमन्दिर में महावीर के गणधर गौतम और सुधर्मा की पादुकाएँ बनी हुई हैं।

बिहार से ७ मील के फामले पर पावापुरी का प्राचीन पावा माना जाता है।

गोव्वरगाम में महावीर ने विहार किया था। महावीर के तीन गणधर

* जम्भियगाम और ऋजुवालिका नदी के विषय में जानने के लिये देखिये मुनि न्यायविजय जी का 'जैन तीर्थों का इतिहास', पृ. ४६५-६६.

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

की यह जन्मभूमि थी। यह स्थान राजगृह और चम्पा के बीच में था।

अंग एक प्राचीन जनपद था। वस्तुतः बुद्ध के समय अंग मगध के ही अधीन था। इसीलिए प्राचीन ग्रन्थों में अंग-मगध का एक साथ उल्लेख किया गया है। रामायण के अनुसार यहाँ शिवजी ने अंग (कामदेव) का मर्म किया था, अतएव इस स्थान का नाम अंग पड़ा। जैन ग्रन्थों में अंग का उल्लेख मिहल, बर्बर, किरात, यवनद्वीप, आगवक, गमक, आलमन्द और कच्छ के साथ किया गया है।

अंग देश मगध के पूर्व में था। इसकी पहचान भागलपुर जिले से की जाती है।

चम्पा अंग देश की राजधानी थी। जैन ग्रन्थों के अनुसार राजा दधिवाहन यहाँ राज्य करता था। चम्पा का उल्लेख महाभारत में आता है। इसका दूसरा नाम मालिनी था। जैन सूत्रों में चम्पा की गणना सम्मदशिखर आदि पवित्र तीर्थों में की गई है।

महावीर, बुद्ध तथा उनके शिष्यों ने चम्पा में अनेक बार विहार किया था और अनेक महत्वपूर्ण सूत्रों का प्रतिपादन किया था। यहाँ रहकर शय्याभव सूरि ने दशवैकालिक नामक जैन सूत्र की रचना की थी। चम्पा की गणना मित्रक्षेत्रा में की गई है।

औपचारिक सूत्र में चम्पा का वर्णन करते हुए कहा है :—

“चम्पा नगरी अतीव समृद्धिशाली थी, प्रजा यहाँ की खुशहाल थी, मैकड़ा-हजारों हलो द्वाग यहाँ की जुताई होती थी, नगरी के आसपास अनेक गाँव थे। यह नगरी ईश्व, जौ, चावल आदि धान्य, तथा गाय, भैंस, मेढ़े आदि धन से समृद्ध थी। यहाँ सुन्दर चैत्य तथा वेश्याओं के अनेक भवन थे। नट, नर्तक, बाजीगर, पहलवान, मुष्टियुद्ध करनेवाले, कथावाचक, रास-गायक, बाँस की नोक पर खड़े होकर तमाशा दिखानेवाले, चित्रपट दिखाकर भिच्छा माँगनेवाले तथा वीणा-वादक आदि लोग यहाँ रहते थे। यह नगरी बाग-बगीचे, कुएँ, तालाब, बावड़ी आदि से मण्डित थी।

बिहार-नैपाल-उड़ीसा-बंगाल-बरमा

इसके चारों ओर गहरी खाई थी। चक्र, गदा, मुसुण्डी (एक प्रकार की गदा), शूतग्री (तलवार अथवा भाले के समान चलाया जाने वाला यन्त्र), कपाट आदि के कारण दुष्प्रवेश थी। चारों ओर में यह परकोटे से घिरी थी। कपिशिर्षक (कंगूरे), अटारी, गोपुर तथा तोरण आदि से शोभायमान थी। अनेक वणिक् तथा शिल्पी यहां माल बेचने आते थे। सुन्दर यहाँ की मड़के थी, आंग हाथी, घोड़े, गधे, पैदल तथा पालकियों के गमनागमन से शोभित था। ”

चम्पा नगरी में पूर्णभद्र यज्ञ का एक प्राचीन चैत्य था, जहाँ महावीर ठहरा करते थे। यह चैत्य खजा, छत्र और घण्टिया से मण्डित था, वेदिका से शोभित था। भूमि यहाँ की गोबर से लिपी हुई थी, गोशीर्ष चन्दन के थापे लगे हुए थे, चन्दन-मन्त्र रक्खे हुए थे, द्वार पर तोरण बँधी थी, सुगन्धित मालाएँ लटकी हुई थीं, रङ्ग-बिरंगे सुगन्धित पुष्प बिखरे हुए थे, सर्वत्र धूप मड़क रही थी। तथा नट, नर्तक, गायक, वादक आदि का यह निवास-स्थान था।

बौद्ध ग्रन्थों में पता लगता है कि चम्पा में गर्गरा नाम की एक परिकरिणी थी। इसके किनारे सुन्दर चम्पक के वृक्ष लगे थे, जिन पर सुगन्धित श्वेत रङ्ग के फूल खिलते थे।

कहते हैं कि राजा श्रेणिक के मरने पर राजा कृणिक को राजगृह में रहना अच्छा न लगा, अतएव उसने चम्पक के सुन्दर वृक्षों का देव्य कर चम्पा नगर बसाया। राजा कृणिक का अपनी रानियों ममेत भगवान महावीर के दर्शन के लिये जाने का विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र में आता है।

चम्पा व्यापार का बड़ा केन्द्र था। यहाँ के व्यापारी माल बेचने के लिये मिथिला, अहिच्छत्रा, सुवर्णभूमि आदि दूर-दूर स्थानों को जाते थे। चम्पा और मिथिला में साठ यात्रा का अन्तर था।

भागलपुर के पास वर्तमान नाथनगर को प्राचीन चम्पा माना जाता है।

चम्पा का शास्वानगर (सवर्वा) पृष्ठचम्पा था। यह चम्पा के पश्चिम में था। महावीर ने यहाँ चातुर्मास किया था।

जैन ग्रन्थों में मन्दिर या मन्दार को पवित्र तीर्थ माना गया है। इसकी गणना सिद्धसेत्रों में की जाती है। ब्राह्मण पुराणों में भी मन्दार का उल्लेख आता है।

इसकी पहचान भागलपुर से दक्षिण की ओर तीस मील की दूरी पर दाग-

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

गिरि से की जाती है। पहाड़ी के ऊपर शीतल जल के कुण्ड हैं।

जैन सूत्रों के अनुसार काकन्द्री में बहुत से श्रमणोंपामक रहते थे। काक-
दिया जैन श्रमणों की शाखा थी। महावीर ने इस नगरी में विहार किया था।

मुंगेर जिले के काकन नामक स्थान को प्राचीन काकन्द्री माना जाता है।
कुछ लोग गोरखपुर जिले के अन्तर्गत खगुदो ग्राम को काकन्द्री मानते हैं।

मध्य में बुद्ध और महावीर ने विहार किया था। बौद्ध सूत्रों के अनुसार
मध्य अंग देश में था। इसकी पहचान मुंगेर से की जाती है। मुंगेर का
प्राचीन नाम मुगलगिरि था।

गया के दक्षिण में मलय नाम का जनपद था। यह वस्त्र के लिये
प्रसिद्ध था।

भद्रिलपुर मलय की राजधानी थी। भद्रिलपुर का गणना अनिशय क्षेत्रों
में की गई है।

भद्रिलपुर की पहचान हजारीबाग जिले के भद्रिया नामक गाँव में की
जाती है। यह स्थान हटरगज से ६ मील की दूरी पर कुलुहा पहाड़ी के पास
है। यहाँ अनेक खडित जिन मूर्तियों मिली हैं। यह तीर्थ विच्छिन्न है। आश्चर्य
है कि जैन लोगों ने इसे तीर्थ मानना छोड़ दिया है।

हजारीबाग जिले का दूसरा महत्वपूर्ण स्थान सम्मेशिखर है। इसे समावि-
गिरि, समिदगिरि, मल्लपर्वत, अथवा शिखर भी कहा जाता है। सम्मेशिखर की
गणना शत्रुघ्न, गिरनार, आबू और अष्टापद नामक तीर्थों के साथ की गई
है। यहाँ से जैनो के २४ तीर्थकरों में से २० तीर्थकरों का निर्वाण हुआ माना
जाता है।

सम्मेशिखर की पहचान वर्तमान पारसनाथ हिल से की जाती है। यह
पहाड़ी ईमरी स्टेशन से दो मील की दूरी पर है।

मलय देश के आमपास का प्रदेश भंगि जनपद कहलाता था। इस जनपद

बिहार-नेपाल-उड़ीसा-बंगाल-बरमा

मे हजारीबाग और मानभूम जिले गर्भित होते हैं ।

पावा भगि जनपद की राजधानी थी । मल्ला की पावा से यह भिन्न है ।

कथगला का उल्लेख जैन और बौद्ध सूत्रों में मिलता है । महावीर और बुद्ध ने यहाँ विहार किया था, बुद्ध यहाँ बेलुवन में ठहरे थे । इस प्रदेश का पुराना नाम औदुम्बर था । उद्बर्गिज्या नामक जैन श्रमणों की शाखा का उल्लेख कल्पसूत्र में आता है ।

कथगला की पहचान सयाल परगना के अतर्गत ककजोल स्थान से की जाती है ।

मगध के उत्तर : विदेह जनपद था । ब्राह्मण ग्रन्थों में विदेह को राजा जनक की राजधानी बताया गया है । बौद्ध सूत्रों में जो वज्रियों के आठ कुल गिनाये हैं, उनमें वैशाली के लिच्छवि और मिथिला के विदेह मुख्य थे । कल्पसूत्र में वज्जनागरी (वार्जनागरी = वृजिनगर की शाखा) नामक जैन श्रमणों की शाखा का उल्लेख आता है । महावीर की माता त्रिशला विदेह देश की होने में विदेहदत्ता कही जाती थी, और विदेहवर्मा चेलना का पुत्र कृष्णक वज्जि विदेहपुत्र कहा जाता था ।

विदेह व्यापार का बड़ा केन्द्र था । व्यापारी लोग श्रावस्ति आदि दूरवर्ती नगरों से यहाँ आते थे ।

वर्तमान तिरहुत का प्राचीन विदेह माना जाता है ।

मिथिला विदेह की राजधानी थी । रामायण में मिथिला को जनकपुरी कहा गया है । बुद्ध और महावीर ने यहाँ अनेक बार विहार किया था । मैथिलिया जैन श्रमणों की शाखा थी । आर्य महागिरि यहाँ आये थे । मिथिला अकपित गणधर की जन्मभूमि थी । चौध निहव की यहाँ स्थापना हुई थी ।

जिनप्रभ मूर्ग के समय मिथिला चण्ड नाम से प्रसिद्ध थी । उस समय यहाँ अनेक कदलीवन, मीठे पानी की बावड़ियाँ, कुएँ, तालाब और नदियाँ मौजूद थी । नगरों के चार दरवाजा पर चार बड़े बाजार थे । यहाँ के साधारण लोग भी विविध शास्त्रों के पंडित होते थे, तथा यहाँ पानाललिंग आदि अनेक तीर्थ मौजूद थे ।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

किमी समय मिथिला प्राचीन भारतीय सभ्यता तथा विद्या का केन्द्र था । ईसवी सन की ६वीं सदी में यहाँ प्रसिद्ध विद्वान् मंडन मिश्र निवास करते थे, जिनकी पत्नी ने शङ्कराचार्य से शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया था । यह नगरी प्रसिद्ध नैयायिक वाचस्पति मिश्र की जन्मभूमि थी, तथा मैथिल कवि विद्यापति यहाँ के राजदरबार में रहते थे ।

नेपाल की सीमा पर जनकपुर को प्राचीन मिथिला माना जाता है ।

वैशाली विदेह की दूसरी महत्त्वपूर्ण राजधानी थी । वैशाली प्राचीन वर्ज्य गणतन्त्र की मुख्य नगरी थी । यहाँ के लोग लिच्छवि कहलाते थे । ये लोग आपस में इकट्ठे होकर प्रत्येक विषय की चर्चा करते, और सब मिलकर राज्य का प्रबंध करते थे । इन लोगों की एकता की प्रशंसा बुद्ध भगवान् ने की थी । वैशाली की कन्याओं का विवाह वैशाली में ही होता था । वैशाली गडकी (गडक) के किनारे बसी थी । बुद्ध और महावीर ने यहाँ अनेक बार विहार किया था । वैशाली महावीर का जन्म-स्थान था, इसलिए वे वैशालीय कहे जाते थे । दोन्ना के पश्चात् उन्होंने यहाँ १२ चातुर्मास व्यतीत किये ।

वैशाली मध्यदेश का सुन्दर नगर माना जाता था । बुद्ध के समय यह बहुत उन्नत दशा में था । यहाँ अनेक उद्यान, आराम वावडी, तालाब तथा पोखरियाँ थी । अम्बापाली नाम की गणिका वैशाली की परम शोभा मानी जाती थी । बुद्ध ने यहाँ स्त्रियों को भिक्षुणी बनने का अधिकार दिया था ।

जैन ग्रन्थों के अनुसार चेटक वैशाली का प्रभावशाली राजा था । उसकी बहन त्रिशला महावीर की माता थी । चेटक काशी-काशल के अठारह गण-राजाओं का मुखिया था । राजा कृष्णिक और चेटक में घोर संग्राम हुआ, जिसमें चेटक पराजित हो गया, और कृष्णिक ने वैशाली में गंधों का हल चलाकर उसे खेत कर डाला ।

हुअन-सांग के समय वैशाली उजाड़ हो चुकी थी ।

मुजफ्फरपुर जिले के थसाढ ग्राम को प्राचीन वैशाली माना जाता है ।

वैशाली के पास कुण्डपुर नाम का नगर था । यहाँ महावीर का जन्म हुआ था । कुण्डपुर क्षत्रियकुण्डग्राम और ब्राह्मणकुण्डग्राम नामक दो मोहल्लों में बँटा था । पहले मोहल्ले में क्षत्रिय और दूसरे में ब्राह्मण रहते थे । कुण्डपुर

बिहार-नैपाल-उड़ीसा-बंगाल-बर्मा

में जातुखण्ड नाम का सुन्दर उद्यान था, जहाँ महावीर ने दीक्षा ग्रहण की थी। इस उद्यान की गणना ऊर्जयन्त और मिडशिला नामक पवित्र क्षेत्रों के साथ की गई है।

आधुनिक बमुकुण्ड को कुण्डपुर माना जाता है।

वैशाली का दूसरा महत्त्वपूर्ण स्थान वाणियगाम था। वैशाली और वाणियगाम के बीच गडकी नदी बहती थी। यहाँ आनन्द आदि अनेक समुद्र जैन श्रमणापामक रहते थे।

आधुनिक बनिया को वाणियगाम माना जाता है।

वाणियगाम उत्तर-पूर्व में कोल्लाग था। यहाँ आनन्द श्रावक के संगे-सम्बन्धी रहते थे। दीक्षा के पश्चात् महावीर ने यहाँ प्रथम भिक्षा ग्रहण की थी।

बसाट के उत्तर-पश्चिम में वर्तमान कोल्हदुआ का काल्लाग माना जाता है। नालन्दा के समीपवर्ती कोल्लाग में यह भिक्षा है।

काल्लाग के पास अट्टियगाम नाम का गाँव था इस वर्धमान भी कहते थे। यहाँ वेगवती (गण्डकी) नाम की नदी बहती थी। शूलपाणि यज्ञ का यहाँ बड़ा मन्दिर था। महावीर ने अट्टियगाम में प्रथम चातुर्मास व्यतीत किया था।

वैशाली के पास आमलकपा नाम का नगर था जहाँ पाण्डनाथ और महावीर ने विहार किया था।

२ : नैपाल

नैपाल में जैन और बौद्ध श्रमणों ने विहार किया था। आजकल भी यहाँ बौद्ध धर्म का बहुत प्रचार है। श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार, पार्शलपुत्र में दुर्भिक्ष पटने पर भद्रबाहू, स्थूलभद्र तथा अन्य अनेक जैन आचार्यों ने यहाँ विहार किया था।

यहाँ सम्राट् अशोक के निर्माण किये हुए प्राचीन स्तूप मिले हैं। नैपाल का राजा असुवर्मा लिच्छवि वंश का था।

नैपाल की पहचान आधुनिक नेपाल राज्य से की जाती है यह जनकपुर से १२० मील की दूरी पर है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

३ : उड़ीसा

कलिंग देश का नाम अग और वग के साथ आता है। वर्तमान उड़ीसा को कलिंग माना जाता है। उड़ीसा को ओड़ या उत्कल नाम से भी कहा जाता था।

ज्ञानक ग्रन्थों में दन्तपुर, महाभाग्न में राजपुर, महावन्तु में मिहपुर और जैन सूत्रों में काचनपुर को कलिंग की राजधानी बताया है। सातवीं सदी में कलिंगनगर भुवनेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआ, जो आजकल टप्पी नाम से प्रख्यात है।

काचनपुर में जैन श्रमणों ने विहार किया था। यह नगर व्यापार का केन्द्र था, और यहाँ के व्यापारी लङ्का तक जाते थे।

आधुनिक भुवनेश्वर का प्राचीन काचनपुर माना जाता है।

पुरी (जगन्नाथपुरी) उड़ीसा की दूसरी मुख्य नगरी थी। यह नगरी जैन और बौद्ध धर्म का केन्द्र थी। यहाँ जीवन्तस्वामी-प्रतिमा थी, और आचार्य वज्रस्वामी ने यहाँ विहार किया था। उस समय यहाँ बौद्ध राजा राज्य करता था, जैन और बौद्धों में वैमनस्य रहता था। जैनो की मान्यता के अनुसार पुरी पहले पार्ष्वनाथ का तीर्थ था। आजकल यह तीर्थ विच्छिन्न है।

पुरी व्यापार का बड़ा केन्द्र था, और यहाँ जलमार्ग से माल आता-जाता था। आजकल यहाँ रथयात्रा का बड़ा उत्सव मनाया जाता है।

भुवनेश्वर स्टेशन से लगभग चार मील पर उदयगिरि और खण्डगिरि नाम की प्राचीन पहाड़ियाँ हैं, जिन्हें काट-काट कर सुन्दर गुफाएँ बनाई गई हैं। इनमें लगभग सो जैन गुफाएँ हैं जो मूर्तिकला की दृष्टि से महत्त्व की हैं। ये गुफाएँ ईसवी मन् के ५०० वर्ष पूर्व के पहले से लेकर ईसवी मन् ५०० तक की बताई जाती हैं। प्रसिद्ध हस्तिगुफा यहाँ पर है जिसमें सम्राट् खारवेल (ईसवी मन् के १६१ वर्ष पूर्व) का शिलालेख है। सम्राट् खारवेल जैनधर्म का अनुयायी था, और उसने मगध से तिन-प्रतिमा लाकर यहाँ स्थापित की थी। उदयगिरि का प्राचीन नाम कुमारी पर्वत है, यहाँ सम्राट् खारवेल के

बिहार-नैपाल-उड़ीसा-बंगाल-बरमा

निर्माण किये हुए कई जिन मन्दिर हैं। उदयगिरि और खण्डगिरि अतिशय क्षेत्र माने जाते हैं।

तोमलि जैन श्रमणों का केन्द्र था। यहाँ का तोमलिक राजा जिन-प्रतिमा की देखरेख किया करता था। महावीर ने यहाँ विद्या किया था, और यहाँ उन्हें अनेक कष्ट सहन करने पड़े थे। तोमलि के निवासी फल-पूजक बहुत शौकीन होते थे। यहाँ नदियों के पानी से खेती होती थी, कभी वर्षा अधिक होने से फसल नष्ट हो जाती थी। ऐसे सकट के समय जैन श्रमण ताड़ के फल खाकर निर्वाह करते थे। तोमलि में अनेक तालाब (तालोदक) थे। यहाँ का भैरव बहुत मरुवनी होती थी, और वे अपने सींगों से मनुष्यों को मार डालती थी। तोमलि जैनों का मृत्यु भेस के मार्ग से हुई थी।

तामलि का पहचान कटक जिले के धौलि नामक गाँव में की जाती है।

शैलपुर तामलि के अन्तर्गत था। यहाँ ऋषिपाल नामक व्यतर का बनाया हुआ ऋषिपट्टाङ्ग* नामक एक तालाब था। इस तालाब का उल्लेख हार्था-गुफा के शिलालेखों में मिलता है। यहाँ लोग आठ दिन तक उत्सव (मखंडि) मनाते थे।

तोमलि के पास हत्यसीस नाम का नगर था। व्यापार का यह बड़ा केन्द्र था। महावीर ने यहाँ विहार किया था।

४ : बंगाल

वग अथवा बंगाल की गणना भारत के प्राचीन जनपदों में की गई है। अग और वग का उल्लेख महाभारत में आता है।

प्राचीन काल में वर्तमान बंगाल भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता था। पूर्वीय बंगाल को समतट, पश्चिमी को लाह, उत्तरी को पुरण्ड, तथा आसाम को कामरूप कहा जाता था। बंगाल को गौड भी कहते थे। जब फारसियान

* कलकत्ता विश्वविद्यालय के स्वर्गीय प्रो० डॉ० बेनीमाधव बडुआ ने इस स्थान का पता लगाया है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

और हुअन-सांग यहाँ आये तो यहाँ बौद्ध धर्म फैला हुआ था। गौड देश में गेशम के कपड़े अच्छे बनते थे।

जैन सूत्रों के अनुसार वग देश की राजधानी ताम्रलिप्ति थी। महाभारत में इस नगरी का उल्लेख आता है। जैन ग्रन्थों के अनुसार यहाँ विद्युच्चर मुनि ने मुक्ति पाई थी। ताम्रलिप्ति व्यापार का बड़ा केन्द्र था, और यहाँ जल-स्थल मार्ग से व्यापार होता था। यहाँ का कपड़ा बहुत अच्छा होता था। व्यापारी लोग यहाँ में जहाज में बैठकर लका, जावा, चीन आदि देशों को जाते थे। हुअन-सांग के समय यहाँ अनेक बौद्ध मठ विद्यमान थे।

रूपनागयण नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित ताम्रलुक का प्राचीन ताम्र-लिप्ति माना जाता है।

जैन सूत्रों में लाट अथवा गट्ट देश की गणना साढ़े पश्चिम आर्य देशों में की गई है। यह देश पहले अनार्य देशों में गिना जाता था, लेकिन मालूम होता है महावीर के विहार के पश्चात् यह आर्य क्षेत्र माना जाने लगा। लाट के विषय में पहले कहा जा चुका है। यहाँ महावीर ने अनेक कष्ट महे थे। लाट को मुद्ग भी कहा गया है। भगवती सूत्र में मुद्गोत्तर (समुत्तर—मुद्ग का उत्तरी भाग) की गणना प्राचीन १६ जनपदों में की गई है।

लाट वज्रभूमि (वृजियों की भूमि) और मुद्गभूमि (मुद्ग) नामक दो प्रदेशों में विभक्त था।

जैन सूत्रों के अनुसार कौटिवर्ष लाट देश की राजधानी थी। कौटिवर्ष-मिया नामक जैन श्रमणों की शाखा थी। कौटिवर्ष के राजा किशत का उल्लेख जैन सूत्रों में आता है। गुप्त-कालीन शिलालेखों में इस नगर का उल्लेख मिलता है।

कौटिवर्ष की पहचान दीनाजपुर जिले के बानगट्ट नामक स्थान में की जाती है।

ददभूमि लाट देश का एक भाग था। यहाँ अनेक मलेच्छ बसते थे। ददभूमि की पहचान आधुनिक धालभूम से की जाती है।

धन्यकटक में जैनों के १३ वे तीर्थंकर का दीक्षा के बाद पहला पारणा हुआ था ।

इसकी पहचान बालासूर जिले के कोपारी नामक स्थान से की जाती है ।

पुरिमताल, लोहमाला राजधानी, उन्नाट और गोभूमि का उल्लेख महावीर की विहार-चर्या में आ चुका है ।

पुरिमताल की सीमा पर मालाटवी नामक चोग का एक गाँव था ।

पुरिमताल की पहचान मानभूम के पास पुकलिया नामक स्थान से की जा सकती है । दूसरा पुरिमताल अयोध्या का शास्वानगर था । कोई लोग प्रयाग को पुरिमताल कहते हैं ।

लोहमाला की पहचान छोटा नागपुर डिवाजन के उत्तर-पश्चिम में लाह-रडगाँव नामक स्थान से की जा सकती है ।

उन्नाट नगर का उल्लेख महाभाग में मिलता है ।

गोभूमि में अनेक गाये चरने के लिये आती थी, इसलिये इस जगह का नाम गोभूमि रक्खा गया । इसकी पहचान आधुनिक गोमोह से की जा सकती है ।

खव्वड अथवा दामी खव्वड नामक जैन भ्रमणों की शाखा का उल्लेख जैन सूत्रों में मिलता है ।

इसकी पहचान पश्चिमी बंगाल में मिदनापुर जिले के पास खव्वट नामक स्थान में की जाती है ।

वर्धमानपुर नगर में विजयवर्धमान नामक उद्यान-स्थित मणिभद्र यज्ञ के मन्दिर में महावीर भगवान् टहरे थे ।

* लोहरडगाँव मुंडा भाषा का शब्द है । 'गोहोर' का अर्थ है 'सूखा' और 'ड' का अर्थ है 'पानी' । इस स्थान पर पानी का एक झरना था जो बाद में सूख गया । इस कारण इस स्थान का नाम 'लोहरडगाँव' पड़ा । देखिए, एम्. सी. गैंग, 'द मुण्डा ऐण्ड देअर कन्ट्री', पृष्ठ १३३.

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

वर्धमानपुर की पहचान वर्दवान से की जा सकती है ।

पुण्ड्रवर्धन उत्तरी बगाल का हिस्सा था । पुण्ड्रवर्द्धणिया जैन श्रमणों की शाखा थी । यहाँ गायों को खाने के लिए पौड़े दिये जाते थे, यहाँ की गायें मरुग्वनी होती थी । वरेन्द्र पुण्ड्रवर्धन का प्रमुख नगर था । हृश्चन-साग ने यहाँ दिगम्बर निर्गन्धों के पाये जाने का उल्लेख किया है ।

पुण्ड्रवर्धन की पहचान बांगरा जिले के महास्थान नामक प्रदेश से की जाती है । यह उत्तरापथ के पुण्ड्रवर्धन से भिन्न है ।

खोमलिजिया (या कोमलीया) जैन श्रमणों की शाखा थी ।

कामला की पहचान पूर्वीय बङ्गाल में चटर्गाँव जिले के कामिल्ला नामक स्थान से की जा सकती है ।

५ : वरमा

सुवर्णभूमि (वरमा) में जैन श्रमणों ने विहार किया था । जैन ग्रन्थों में पता लगता है कि आचार्य कालक उज्जयिनी में सुवर्णभूमि जाकर सागरग्वमण से मिले । उसमें पता लगता है कि जैन श्रमणों का यहाँ प्रवेश हुआ था । सुवर्णभूमि व्यापार का बड़ा केन्द्र था ।

उत्तरप्रदेश

प्राचीन भारत के मध्यदेश के बहुमुखक जनपद आधुनिक उत्तरप्रदेश में आते हैं, इसमें मालूम होता है कि प्राचीन काल में यह प्रदेश बहुत समृद्ध और उन्नत दशा में था। कोख-पाण्डवों का निवास-स्थान कुरु देश, राम-लक्ष्मण की जन्मभूमि अयोध्या, कृष्ण महाराज के क्रीड़ास्थल मथुरा और बुद्धदेव की निर्वाणभूमि कुशीनारा, गणराजाश्री के देश काशी और काशल, मल्लों की राजधानियाँ कुशीनारा और पावा, तथा वाराणसी प्रयाग, हार्द्वार, मथुरा, कौशीर्या और सागनाथ जैसे पवित्र स्थान इसी प्रान्त की शोभा बढ़ाते हैं।

१ : पूर्वीय उत्तर प्रदेश

काशी मध्यदेश का प्राचीन जनपद था। काशी के वस्त्र और चर्मदिन का उत्कृष्ट वौद्ध जातकों में मिलता है। प्राचीन जैन स्त्रियों में काशी और कोशल के अष्टादश गणराजाश्री का जिक्र आता है। काशी को जीतने के लिए कोशल के राजा पसेनदि और मगध के राजा अजातशत्रु में युद्ध हुआ था, जिसमें अजातशत्रु की विजय हुई और काशी का मगध में मिला लिया गया। जैन मान्यता के अनुसार यहाँ के राजा शल्य को महावीर ने दीक्षित किया था। काशी व्यापार का बड़ा केन्द्र था।

आचल की बनारस कमिश्नरी को प्राचीन काशी माना जाता है।

वाराणसी (बनारस) काशी की राजधानी थी। वरुणा और अमि नामक दो नदियों के बीच होने के कारण इस नगर का नाम वाराणसी पड़ा।

वाराणसी गंगा के किनारे बसी थी। इस स्थान को बुद्ध और महावीर ने

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

अपने विहार से पवित्र किया था। बौद्ध सूत्रों में वाराणसी की गणना कपिल-वस्तु, बुद्धगया और कुशीनारा के साथ की गई है। ब्राह्मण ग्रन्थों में पूर्व में वाराणसी, पश्चिम में प्रभास, उत्तर में केदार और दक्षिण में श्रीपर्वत को परम तीर्थ माना गया है। जैन ग्रन्थों के अनुसार यहाँ भेलुपुर में पार्श्वनाथ और भद्रेनी में सुपार्श्वनाथ का जन्म हुआ था।

जिनप्रभसूरि के कथनानुसार बनारस चार भागों में विभक्त था :—देव वागण्मी, राजधानी वाराण्मी, मदन वाराण्मी और विजय वागण्मी। यहाँ दन्तव्यात नाम का प्रसिद्ध तालाब था, तथा मणिकर्णिका घाट यहाँ के पवित्र पाँच घाटों में गिना जाता था। मयगतीर (मृतगंगातीर) नाम का यहाँ दूसरा प्रसिद्ध तालाब (ह्रद) था, जिसमें गङ्गा का बहुत-सा पानी इकट्ठा हो जाता था।

हुआन-सांग के समय यहाँ अनेक बौद्ध विहार और हिन्दू मन्दिर मौजूद थे।

वाराण्मी व्यापार और विद्या का केन्द्र था। यहाँ के विद्यार्थी तनशिला विद्याध्ययन के लिये जाते थे, तथा यहाँ शास्त्रार्थ हुआ करते थे।

बनारस में आजकल भी अनेक मन्दिर, मूर्तियाँ और प्राचीन स्थान मौजूद हैं। आचार्य हेमचन्द्र के समय काशी वागण्मी का ही दूसरा नाम था।

इमिपतन बौद्धों का परम तीर्थ माना जाता है। यहाँ बुद्ध भगवान का प्रथम धर्मोपदेश हुआ था। यहाँ की खुदाई में प्राचीन काल के अवशेष उपलब्ध हुए हैं। जैन ग्रन्थों में इसे सिंहपुर नाम से कहा गया है। यहाँ शीलनाथ नामक जैन तीर्थंकर का जन्म हुआ था।

सिंहपुर की पहचान वर्तमान सागनाथ (सागङ्गनाथ) में की जाती है। यह स्थान बनारस के उत्तर में छह मील की दूरी पर है। यहाँ एक अज्ञातयवधर और बौद्ध मन्दिर हैं।

चन्द्रानन चन्द्रप्रभा तीर्थंकर का जन्म-स्थान माना जाता है। १७-१८वीं सदी के जैन यात्रियों ने इसका नाम चन्द्रमाधव लिखा है। विविधतीर्थकल्प के अनुसार चन्द्रावती नगरी बनारस से अढ़ाई योजन की दूरी पर थी।

चन्द्रानन की पहचान आधुनिक चन्द्रपुरी में की जाती है। यह स्थान गङ्गा के किनारे है और बनारस से लगभग चौदह मील के फासले पर है।

उत्तरप्रदेश

आलमिया जैन श्रमणोपासकों का केन्द्र था। यहाँ महावीर और बुद्ध ने चातुर्मास व्यतीत किया था। गोशाल यहाँ पत्तकालय उद्यान में ठहरे थे। बौद्ध सूत्रों में इसे आलवी कहा गया है। यह स्थान श्रावस्ति और गजगृह के बीच बनारस से बारह योजन दूर था।

काशी से मटा हुआ वत्स जनपद था। बौद्ध सूत्रों में इसे वश कहा गया है। वत्साधिपति उदयन का उल्लेख ब्राह्मण, बौद्ध और जैन ग्रन्थों में मिलता है।

प्रयाग के इर्दगिर्द के प्रदेश को वत्स कहते हैं।

कौशावी वत्स की राजधानी थी। कौशावी का उल्लेख महाभारत और रामायण में आता है। कहते हैं कि हस्तिनापुर के गङ्गा से नष्ट हो जाने पर राजा परीक्षित के उत्तराधिकारियों ने कौशावी को अपनी राजधानी बनाया। बुद्ध और महावीर ने यहाँ विहार किया था। यहाँ कुक्कुटागम, घोमिनागम प्रावरण, अभ्युदन आदि उपासनों का उल्लेख बौद्ध सूत्रों में आता है, जहाँ भगवान बुद्ध उदरग करते थे। कहा जाता है कि एक बार कौशावी के बौद्ध भिक्षुओं में बहुत झगडा हो गया, बुद्ध ने कौशावी पहुँच कर भिक्षुओं को बहुत समझाया, परन्तु कोई फल न हुआ।

कौशावी जैनो का अतिशय क्षेत्र माना जाता है। यहाँ पद्मप्रभ तीर्थंकर का जन्म हुआ था। यही महावीर की प्रथम शिष्या चन्दनवाला और गर्नी मृगावती श्रमण धर्म में दीक्षित हुई थी। कहते हैं कि उज्जैनी के राजा प्रद्योत ने गर्नी मृगावती को पाने के लिये कौशावी के राजा शतार्नीक पर चढ़ाई कर दी। शतार्नीक की अतिमार से मृत्यु हो गई। बाद में अपने पुत्र उदयन को राजगद्दी पर बैठा कर मृगावती ने महावीर से दीक्षा ले ली।

आर्य सुहस्ति और आर्य महागिरि कौशावी आये थे। बौद्ध ग्रन्थों से पता लगता है कि कौशावी में बुद्ध भगवान की रक्तचन्दन-निर्मित सुन्दर प्रतिमा थी, जिसे राजा उदयन ने अपने खास कारीगरों से बनवाया था। सम्राट् अशोक ने यहाँ बौद्ध स्तूप निर्माण कराया था।

इलाहाबाद से लगभग तीस मील की दूरी पर कोसम गाँव को प्राचीन

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

कौशाबी माना जाता है। यह तीर्थ विच्छिन्न है। यहाँ सूर्य की बड़ी मज्ज सुन्दर मूर्ति है।

कौशाबी के पास प्रयाग था। महाभारत में इसका उल्लेख आता है। जैन ग्रन्थों में प्रयाग को तीर्थक्षेत्र माना गया है। यहाँ अग्निष्वात्मियों को गङ्गा पार करते समय केवलज्ञान हुआ था। प्रयाग को दिनप्रयाग भी कहा गया है। पालि साहित्य में इसे प्रयागपतिष्ठान कहा है।

प्रयाग आजकल गङ्गा, जमुना और सरस्वती (गुप्त) के संगम पर अवस्थित है। यह ब्राह्मणों का परम धाम माना जाता है। अक्षयवट यहाँ का परम पवित्र स्थान है। प्रयाग में मुण्डन का बड़ा माहात्म्य है। बादशाह अकबर के समय से इसका नाम इलाहाबाद पड़ा।

सुप्रतिष्ठानपुर, प्रातिष्ठानपुर या पोतनपुर प्रयाग की राजधानी थी। यहाँ चन्द्रवर्षी राजा राज्य करते थे। यह नगर गङ्गा के किनारे बसा था।

आजकल यह स्थान इलाहाबाद जिले में फैली के पास है। दक्षिण के प्रतिष्ठान से यह भिन्न है।

तुङ्गि मनिवंश कौशाबी के आसपास था। मेतार्य नामक महावीर के गणधर की यह जन्मभूमि थी।

प्राचीन काल में कोशल (अवध) एक समृद्ध जनपद था। जैनो के आदि तीर्थंकर ऋषभदेव ने यहाँ जन्म लिया था, इसलिए वे कौशलिक कहे जाते थे। अवध गणधर का यह जन्मस्थान था, और यहाँ जीवन्तस्वामी प्रतिमा विद्यमान थी। कोशल के राजा पसेनदि का उल्लेख बौद्ध सूत्रों में आता है।

साकेत (अयोध्या) दक्षिण कोशल की राजधानी थी। ब्राह्मण पुराणों में अयोध्या को मध्यदेश की राजधानी कहा है। यह नगर रामचन्द्र जी की जन्मभूमि थी। रामायण में अयोध्या का वर्णन करते हुए कहा है—“मरु नदी के किनारे पर अवस्थित यह नगरी धन-धान्य से परिपूर्ण थी, सुन्दर यहाँ

मार्ग बने हुए थे, अनेक शिल्पी और देश-विदेश के व्यापारी यहाँ बसते थे। यहाँ के लोग समृद्धिशाली, धर्मात्मा, पराक्रमा और दीनार्थु थे, तथा अनेक उनके पुत्र-पौत्र थे।”

जैन परम्परा के अनुसार अयोध्या को आदि तीर्थ और आदि नगर माना गया है, और यहाँ के निवासियों को सभ्य और सुमंस्कृत बताया गया है।

बुद्ध और महावीर के समय अयोध्या को माकेत कहा जाता था। माकेत के सुभूमिभाग उद्यान में विहार करते हुए महावीर ने जैन भ्रमणों के विहार की सीमा नियत की थी। यही उन्होंने कोटिवर्ष के राजा चिलान को दीक्षा दी थी। बुद्ध ने भी माकेत में विहार किया था।

इस नगरी को कोशला, विनीता, इक्ष्वाकुभूमि, रामपुरी, विशाखा आदि नामों से भी पुकारा गया है। आजकल अयोध्या में ब्राह्मणों के अनेक तीर्थ बने हुए हैं। जिनप्रभ मूर्ति ने अपने विविधतीर्थकल्प में घग्गर (घाघरा) और सरयू नदी के मङ्गल पर ‘स्वर्गद्वार’ होने का उल्लेख किया है।

रत्नपुरी धर्मनाथ तीर्थकर की जन्मभूमि माना जाता है। जिनप्रभ मूर्ति के समय यह नगर रत्नवाट नाम से पुकारा जाता था। जैन यात्रियों ने इसका गेडनाई नाम से उल्लेख किया है।

आजकल यह स्थान पैजाबाद के पास मोहावल स्टेशन में एक मील उत्तर की ओर है।

श्रावस्ति (सहेट-महेट, जिला गोडा) उत्तर कोशल या कुणाल जनपद की राजधानी थी। श्रावस्ति का दूसरा नाम कुणालनगरी था। श्रावस्ति और माकेत के बीच सात योजन (१ योजन=५ मील) का अन्तर था।

श्रावस्ति अचिरावती (राम्पी) नदी के किनारे थी। जैन सूत्रों में कहा गया है कि इस नदी में बहुत कम पानी रहता था; इसके बहुत से प्रदेश सूखे रहते थे, और जैन साधु इस नदी को पार कर भिक्षा के लिये जा सकते थे। बाद सूत्रों से पता लगता है कि इस नदी के किनारे स्नान करने के अनेक स्थान बने हुए थे। नगर की वेश्यायें यहाँ बस्त्र उतार कर स्नान करती थी। उनकी देखादेखी बौद्ध भिक्षुगणों भी स्नान करने लगीं, इस पर बुद्ध ने उन्हें वहाँ स्नान करने से रोका। अचिरावती में बाद आने से लोग का बहुत नुक-

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

मान होता था। एक बार तो नगरी के सुप्रसिद्ध धनी अनाथपिंडक का मय माल-स्वजाना नदी में बह गया था। श्रावस्ति की बाढ़ का उल्लेख आवश्यक-चूर्णि में भी मिलता है। जैन अनुश्रुति के अनुसार इस बाढ़ के १३ वर्ष बाद महावीर ने केवलज्ञान प्राप्त किया।

श्रावस्ति का रामायण और जातकों में उल्लेख आता है। बुद्ध और महा-वीर के समय यह नगरी बहुत उन्नत दशा में थी। इन महात्माओं ने यहाँ अनेक चातुर्मास व्यतीत किये थे। अनाथपिंडक के निर्माण किये हुए जेतवन में बुद्ध ठहरा करते थे। सूत्र और विनयपिटक के अधिकांश भाग का उन्धाने यहीं प्रवचन किया था। श्रावस्ति बौद्धा का बड़ा केन्द्र था। यहाँ के अनाथ-पिंडक और मृगारमाता विशाखा बुद्ध के बड़े प्रशंसक और प्रतिष्ठाता थे। आर्य स्कंद और गोशाल ने यहाँ विहार किया था। गोशाल की उपासिका हाना-दला कुम्हारी यहाँ रहती थी। पार्श्वनाथ के अनुयायी केशाकुमार और महावीर के अनुयायी गौतम गणधर में यहाँ सैद्धांतिक चर्चा हुई थी। महावीर को केवलज्ञान होने के १४ वर्ष पश्चात् यहाँ के कोष्ठक चैत्य में प्रथम निहव की स्थापना हुई।

जैन ग्रन्थों के अनुसार श्रावस्ति सभवनथ की जन्मभूमि थी। आजकल यह तीर्थ विच्छिन्न है। बौद्ध सूत्रों के अनुसार श्रावस्ति के चार दरवाजे थे, जो उत्तरद्वार, पूर्वद्वार, दक्षिणद्वार और केवट्टद्वार के नाम से पुकारे जाते थे। विविधनीर्यकल्प में श्रावस्ति में एक मन्दिर और ग्न्त अशोक वृक्ष के होने का उल्लेख है। श्रावस्ति महेठि नाम से भी कही जाती थी।

जिनप्रभ सूरि के अनुसार यहाँ समुद्रवशीय राजा राज्य करते थे। ये बुद्ध के परम उपासक थे, और बुद्ध के सम्मान में वरघोड़ा निकालते थे। श्रावस्ति में अनेक प्रकार का चावल पैदा होता था।

आजकल श्रावस्ति चारों ओर से जंगल से घिरी हुई है। यहाँ बुद्ध की एक विशाल मूर्ति है जिसके दर्शन के लिये बौद्ध लोग बर्मा आदि सुदूर देशों में आते हैं। यह स्थान बलगामपुर से मान कांस की दूरी पर है और एक मील तक फैला हुआ है।

श्रावस्ति से पूर्व की ओर केकय जनपद था, जो उत्तर के केकय से भिन्न है। जैन सूत्रों में केकय के आधे भाग को आर्यक्षेत्र माना गया है, इससे पता

उत्तरप्रदेश

चलता है कि इसके थोड़े से भाग में ही जैनधर्म का प्रसार हुआ था; सम्भवतः अवशिष्ट भाग में जङ्गली जातियाँ बसती हों।

केकय देश श्रावस्ति के उत्तर-पूर्व में नेपाल की तराई में अवस्थित था।

मेयविया (श्वेतिका) केकय की राजधानी थी। बौद्ध सूत्रों में इसका नाम मेतव्या बताया गया है; यह नगरी कोशल देश में थी। जैन परम्परा के अनुसार यहाँ महावीर के केवलजान होने के २१४ वर्ष बाद तीसरे निह्व की स्थापना हुई।

बुद्ध की जन्मभूमि होने के कारण कपिलवस्तु को बौद्ध ग्रन्थों में महानगर बताया गया है। शाक्यों की यह राजधानी थी। इसके पास रोहिणी नदी बहती थी, जो शाक्य और मेतियों के बीच की सीमा थी। चीनी यात्री फाहियान के समय यह नगर उगाड़ पड़ा था।

कपिलवस्तु की पहचान नेपाल की तराई में रुम्भिनदेई नामक स्थान से की जाती है। यह स्थान घने जङ्गलों से आच्छादित है।

कुसीनारा बुद्ध की परिनिर्वाण भूमि होने से पवित्र स्थान माना जाता है। यह नगरी मल्लों की राजधानी थी; इसका पुराना नाम कुसावती था। सम्राट अशोक ने यहाँ अनेक स्तूप और विहार बनवाये थे। ह्युअन-माग ने इस तीर्थ के दर्शन किये थे।

कुसीनारा की पहचान गोरखपुर जिले के कसया नामक ग्राम से की जाती है।

कुसीनारा के पास पावा नगरी थी। यह मल्लों की राजधानी थी। कुसीनारा और पावा के बीच ककुत्था नदी बहती थी।

पावा की पहचान गोरखपुर जिले के पड़रौना नामक स्थान से की जाती है।

गोरखपुर जिले में दूसरा स्थान खुलुन्दो है। इसका प्राचीन नाम किष्किन्धापुर बताया जाता है। जैन यात्री यहाँ यात्रा करने आते हैं। यहाँ पार्श्वनाथ की मूर्ति को लोग नाथ कह कर उसकी पूजा करते हैं। यह स्थान गोरखपुर के पूर्व में लगभग २५ कोस पर है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

२ : पश्चिमी उत्तरप्रदेश

प्राचीन काल में पांचाल (रुहेलखण्ड) एक समृद्धिशाली जनपद था । महाभारत में इसका अनेक जगह उल्लेख आता है । पांचाल में जन्म होने के कारण द्रौपदी पांचाली कही जाती थी ।

वदार्यु, फरुखाबाद और उसके इर्दगिर्द के प्रदेश को पांचाल माना जाता है ।

भागीरथी नदी के कारण पांचाल देश दो भागों में विभक्त था. एक दक्षिण पांचाल दूसरा उत्तर पांचाल । महाभारत के अनुसार दक्षिण पांचाल की राजधानी कापिल्य और उत्तर पांचाल की राजधानी अहिच्छत्रा थी ।

कापिल्यपुर अथवा कम्पिलनगर गङ्गा के तट पर बसा था । यहाँ बड़ी धूम-धाम से द्रौपदी का स्वयंवर रचा गया था । जैनो के १३वें तीर्थंकर विमलनाथ की यह जन्मभूमि थी । यहाँ महावीर के श्रावक रहते थे, और यहाँ इन्द्र महोत्सव मनाया जाता था ।

कापिल्यपुर की पहचान फरुखाबाद जिले के कपिल नामक स्थान से की जाती है । यहाँ बहुत-सी खडित प्रतिमाएँ मिली हैं । यहाँ कई जैन मन्दिर हैं और मूर्तियों पर लेख खुदे हैं ।

दक्षिण पांचाल की दूसरी राजधानी माकदी थी । यह नगरी व्यापार का केन्द्र था । हरिभद्र सूरि की समराइचकहा में इस नगरी का वर्णन आता है ।

अहिच्छत्रा या अहिच्छेत्र उत्तर पांचाल की राजधानी थी । जैन सूत्रों में इसे जागल अथवा कुरु जागल की राजधानी बताया गया है । यह नगरी शम्भुवती, प्रत्यग्रथ और शिवपुर नाम से भी पुकारी जाती थी । इसकी गणना अष्टापद, ऊर्जयन्त, गजाग्रपदगिरि, धर्मचक्र और रथावर्त नामक पवित्र तीर्थों के साथ की गई है ।

जैन मान्यता के अनुसार यहाँ धरणेन्द्र ने अपने फण से पार्श्वनाथ की रक्षा की थी । लेकिन आजकल यह तीर्थ विच्छिन्न है । हुआन-सांग के समय यहाँ नगर के बाहर नागहृद था, जहाँ बुद्ध भगवान् ने सात दिन तक नागराज को उपदेश दिया था । इस स्थान पर सम्राट् अशोक ने स्तूप बनवाया था । त्रिप्रभ सूरि के विविधतीर्थकल्प में कहा गया है कि यहाँ ईंटों का किला

उत्तरप्रदेश

और मीठे पानी के मात कुंड थे जिनमें स्नान करने से स्त्रियाँ पुत्रवती होती थी। नगरी के बाहर और भीतर अनेक कुएँ, बावड़ी आदि बने थे जिनमें नहाने से काढ़ आदि रोग शान्त हो जाते थे। यहाँ अनेक औषधियाँ मिलती थी, तथा बहुत से तीर्थस्थान थे।

अहिच्छत्रा की पहचान बरेली जिले में रामनगर नामक स्थान से की जाती है। यहाँ बहुत से पुगने मिकके और मूर्तियाँ उपलब्ध हुई हैं, तथा प्राचीन खडहर पड़े हुए हैं।

दक्षिण पाचाल में पूर्व की ओर कान्यकुब्ज नाम का समृद्ध नगर था। यह उन्नाव, गांधीपुर, महोदय और कुशस्थल नामों में भी पुकारा जाता था।

कान्यकुब्ज सारवा पदी से लेकर १०वीं सदी तक उत्तर भारत के साम्राज्य का केन्द्र और समूह भारत का मुख्य नगर था। चीनी यात्री हुआन-सांग के आगमन के समय यहाँ राजा दृषेवर्धन का राज्य था। उस समय यह नगर शरसेन में शामिल था।

कान्यकुब्ज की पहचान यमुना के पश्चिमी किनारे पर स्थित कन्नौज में की जाती है।

जैन सूत्रों में अतरजिया नगरी का उल्लेख आता है। अतरजिया जैन भ्रमणा की शाखा थी, इसमें पता लगता है कि यह स्थान जैनो का केन्द्र था। महगुप्त आचार्य ने यहाँ छोटे निहव की स्थापना की थी। आर्द्धने अकवरी में इस कन्नौज का परगना बताया गया है।

अतरजिया की पहचान एटा जिले के अतरजिया नामक खेड से की जाती है। यह स्थान काली नदी पर है।

मकस्म अथवा मकिस बौद्धों का तीर्थ स्थान है। यहाँ अशोक ने स्तम्भ बनवाया था। फाहियान और हुआन-सांग यहाँ आये थे। जैन कवि धनपाल की यह जन्मभूमि थी। यह स्थान आजकल इमी नाम से प्रसिद्ध है और काली नदी पर बसा है। यहाँ बहुत से मिकके और ध्वमावेश्य मिले हैं।

कुशार्त की गणना जैनो के साढ़े पच्चीस आर्य देशों में की गई है। जैन

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

ग्रन्थों में कहा गया है कि राजा शौरि ने अपने लघु भ्राता सुवीर को मथुरा का राज्य सौंपकर कुशार्त देश में जाकर शौरिपुर नगर बनाया। पश्चिम के कुशार्त नगर से यह भिन्न है।

शौरिपुर या सूर्यपुर कुशार्त की राजधानी थी। जैन परम्परा के अनुसार यह नगर कृष्ण और उनके चचेरे भाई नेमिनाथ की जन्मभूमि थी।

शौरिपुर यमुना के किनारे बना था। इसकी पहचान आगरा जिले के सूर्य-पुर नामक स्थान से की जाती है। यह स्थान यमुना के दाहिने किनारे बटेसर के पास है। श्वेताम्बर आचार्य हीरविजय सूरि के आगमन के समय इस तीर्थ का जीर्णोद्धार किया गया था। बटेसर में बहुत-से शिव-मन्दिर बने हैं और यहाँ कार्तिक महीने में बड़ा मेला लगता है जिसमें बहुत से घोड़े, ऊँट आदि बिकने आते हैं।

प्राचीन ग्रन्थों में शूरसेन का उल्लेख आता है। ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार इसे राम के छोटे भाई शत्रुघ्न ने बनाया था। यहाँ की भाषा शौरसेनी कही जाती थी। मथुरा के ग्रामपाम का प्रदेश शूरसेन कहा जाता है।

शूरसेन की राजधानी मथुरा थी। उत्तगपथ का यह महत्त्वपूर्ण नगर था। महाभारत के अनुसार मथुरा यादवों की भूमि थी। कंसवध के पश्चात् जरासंध के भय से यादव लोग मथुरा छोड़कर पश्चिम की ओर चले गये और वहाँ उन्होंने द्रागका नगरी बसाई।

बृहत्कल्यमाण्य में कहा गया है कि मथुरा के अन्तर्गत ६६ गाँवों के रहने वाले लोग अपने घरों और चौगहों पर जिन भगवान् की प्रतिमा स्थापित करते थे। यहाँ एक मोने का स्तूप था, जिस पर जैन और बौद्धों में झगड़ा हुआ था। कहते हैं कि अन्त में इस स्तूप पर जैनो का अधिकार हो गया। रवि-पेण के बृहत्कथाकोश तथा सोमदेव सूरि के यशस्तिलक चम्पू में इसे देव-निर्मित स्तूप कहा गया है। राजमल्ल के जम्बूस्वामी चरित में मथुरा में ५०० स्तूपों का उल्लेख है, जिनका उद्धार अकबर बादशाह के समकालीन माहू टोडर द्वारा किया गया था। मथुरा का प्राचीन स्तूप आजकल ककाली टीले के रूप में मौजूद है, जिसकी खुदाई से पुरातत्त्व संबंधी अनेक महत्त्वपूर्ण बातों का पता लगा है।

मथुरा में अन्तिम केवली जम्बूस्वामी का निर्वाण हुआ था, अतएव इसकी गणना सिद्धन्तों में की गई है। ईसवी सन् की चौथी शताब्दि में जैन आगमा की संकलना के लिए यहाँ जैन श्रमणों का सम्मेलन हुआ था। आर्यमगु और आर्यरक्षित ने इस नगरी में विहार किया था।

बौद्ध ग्रन्थों में मथुरा में पाँच दोष बताये गये हैं :—भूमि की विषमता, धूल का आधिक्य, कुत्तों का उपद्रव, यत्नों का उपद्रव और भिक्षा की दुर्लभता। कहते हैं कि एक बार बुद्ध भगवान् नगर में प्रवेश करना चाहते थे, परन्तु यत्तिणी के उपद्रव के कारण वापिस लौट गये। लेकिन मालूम होता है कि फाहियान और हुआन-सांग के समय मथुरा में बौद्ध धर्म का जोर था, और उस समय यहाँ अनेक सभाराम और स्तूप बने हुए थे, तथा यहाँ का राजा और उसके मन्त्री बौद्ध धर्म के अनुयायी थे।

प्राचीन काल में ही मथुरा अनेक साधु-मन्तों का केन्द्र रहा है, इसलिये इसे पावडिगर्भ कहा गया है। मथुरा भडींग (वट वृक्ष) यक्ष की यात्रा के लिए प्रसिद्ध था। इस यात्रा में अनेक नर-नारी सम्मिलित होते थे। विविध-तीर्थकल्प में मथुरा में १२ वनों का उल्लेख आता है।

मथुरा व्यापार का बड़ा केन्द्र था, यहाँ कपड़ा बहुत अच्छा बनता था। यहाँ के लोग खेती-बारी नहीं करते थे, उनकी आजीविका का मुख्य साधन व्यापार था। राजा कनिष्क के समय मथुरा से आवस्ति, वनागस आदि नगरों को मूर्तियाँ भेजी जाती थी।

मथुरा आजकल वैष्णवों का परम धाम माना जाता है। यहीं पास में वृन्दावन है। मथुरा के आमपास चौगसी कोम का घेरा ब्रजमंडल कहा जाता है।

मथुरा की पहचान मथुरा से दक्षिण-पश्चिम में महोली नामक ग्राम से की जाती है। मथुरा में चौगसी नामक स्थान पर दिगम्बर जैन मन्दिर बना हुआ है।

मथुरा से ऊपर की ओर अच्छा जनपद था। इसकी राजधानी का नाम वरणा था। वरणा गण और उच्चानागरी शाखा का उल्लेख कल्पसूत्र में आता है, इससे मालूम होता है, यह प्रदेश जैन श्रमणों का केन्द्र था।

वरणा की पहचान बुलन्दशहर से की जाती है जो उच्चानगर का ही

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

भाषातः है। आजकल भी यह वारन नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ प्राचीन सिक्के उपलब्ध हुए हैं।

कुरु या कुरुजागल का महाभारत में अनेक जगह उल्लेख आता है। यहाँ के लोग बहुत बुद्धिमान् और स्वस्थ माने जाते थे। भगवान् बुद्ध का उपदेश सुनकर यहाँ बहुत-से लोग उनके अनुयायी बने थे।

कुरुक्षेत्र या स्थानेश्वर के इर्दगिर्द के प्रदेश का कुरुदेश माना जाता है।

जातक ग्रन्थों के अनुसार कुरुदेश की राजधानी इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) थी, और यह यमुना के किनारे बसी हुई थी। राजा युधिष्ठिर की यह मुख्य नगरी थी।

जैन सूत्रों के अनुसार कुरु की राजधानी हस्तिनापुर थी। हस्तिनापुर का दूसरा नाम नागपुर था। वसुदेवहिण्डी में इसे ब्रह्मस्थल नाम से कहा गया है। यह स्थान जैन तीर्थंकर, चक्रवर्ती तथा पांडवों की जन्मभूमि माना जाता है। इस नगर की गणना अतिशय क्षेत्रों में की गई है। हस्तिनापुर में महावीर ढाग शिवराज को दीक्षा दिये जाने का उल्लेख जैन सूत्रों में मिलता है।

आजकल यह नगर उजाड़ पड़ा है। जङ्गल में जैन नशियाँ बनी हुई हैं, जहाँ तीर्थंकरों की चरण-पादुकाएँ हैं। यह स्थान मेरठ जिले में मवाने के पास उसी नाम से प्रसिद्ध है। आजकल यहाँ खुदाई चल रही है। इसके आसपास ग्वादर है, मगर इसे खेती करने योग्य बनाने का उद्योग कर रही है।

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात- राजपूताना-मालवा-बुन्देलखंड

१ : पंजाब-सिन्ध

मान्य होता है कि निर्दोष ग्यान-पान की सुविधा न होने के कारण पंजाब और सिन्ध में जैनधर्म का इतना प्रचार नहीं हो सका जितना अन्य प्रदेशों में हुआ। सिन्धु देश के विषय में छेदसूत्रों में कहा है कि यदि दुष्काल विरुद्ध राज्यातिक्रम या अन्य किसी अपरिहार्य आपत्ति के कारण वहाँ जाना पड़े तो यथाशीघ्र वहाँ से लौट आना चाहिये। क्योंकि वहाँ भक्ष्याभक्ष्य का विचार नहीं, लोग मांस और मद्य का सेवन करते हैं, तथा पाखण्डी साधु और माध्वी वहाँ निवास करते हैं।

प्राचीन जैन ग्रन्थों में गंधार का उल्लेख आता है। बौद्ध सूत्रों में गंधार का उत्तगपथ का प्रथम जनपद बताया गया है।

तक्षशिला और पुष्करावती गंधार देश की क्रम से पूर्वी और पश्चिमी राजधानियाँ थीं। जातक ग्रन्थों के अनुसार तक्षशिला समूचे भारत का विद्याकेन्द्र था, और यहाँ लाट, कुरु, मगध, शिवि आदि दूर-दूर देशों के विद्यार्थी पढ़न आते थे। प्रसिद्ध वैयाकरण्य पाणिनी और प्रख्यात वैद्यराज जीवक ने यहीं विद्याभ्यास किया था।

जैन ग्रन्थों में तक्षशिला का बहली देश का राजधानी बताया गया है। जैन परम्परा के अनुसार, ऋषभदेव ने अयोध्या का राज्य भरत का और बहली का राज्य बाहुबलि को सौंपकर दीक्षा ग्रहण की थी। बाद में चलकर भरत और बाहुबलि दोनों में युद्ध हुआ और बाहुबलि ने भी दीक्षा ग्रहण कर ली।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

भाषांतर है। आजकल भी यह वारन नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ प्राचीन सिक्के उपलब्ध हुए हैं।

कुरु या कुरुजागल का महाभारत में अनेक जगह उल्लेख आता है। यहाँ के लोग बहुत बुद्धिमान और स्वस्थ माने जाते थे। भगवान् बुद्ध का उपदेश सुनकर यहाँ बहुत-से लोग उनके अनुयायी बने थे।

कुरुक्षेत्र या स्थानेश्वर के इर्दगिर्द के प्रदेश को कुरुदेश माना जाता है।

जातक ग्रन्थों के अनुसार कुरुदेश की राजधानी इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) थी, और यह यमुना के किनारे बसी हुई थी। राजा युधिष्ठिर की यह मुख्य नगरी थी।

जैन सूत्रों के अनुसार कुरु की राजधानी हस्तिनापुर थी। हस्तिनापुर का दूसरा नाम नागपुर था। वसुदेवहिण्डी में इसे ब्रह्मस्थल नाम से कहा गया है। यह स्थान जैन तीर्थंकर, चक्रवर्ती तथा पांडवों की जन्मभूमि माना जाता है। इस नगर की गणना अतिशय क्षेत्रों में की गई है। हस्तिनापुर में महावीर द्वारा शिवराज को दीक्षा दिये जाने का उल्लेख जैन सूत्रों में मिलता है।

आजकल यह नगर उजाड़ पड़ा है। जङ्गल में जैन नशियों बनी हुई हैं, जहाँ तीर्थंकरों की चरण-पादुकाएँ हैं। यह स्थान मेरठ जिले में मवाने के पास रूमी नाम से प्रसिद्ध है। आजकल यहाँ खुदाई चल रही है। इसके आसपास खादर हैं, सरकार इसे खेती करने योग्य बनाने का उद्योग कर रही है।

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात- राजपूताना-मालवा-बुन्देलखंड

१ : पंजाब-सिन्ध

मालूम होता है कि निर्दोष खान-पान की सुविधा न होने के कारण पंजाब और सिन्ध में जैनधर्म का इतना प्रचार नहीं हो सका जितना अन्य प्रदेशों में हुआ। सिन्धु देश के विषय में छेदसूत्रों में कहा है कि यदि दुष्काल विरुद्ध गज्यातिक्रम या अन्य किसी अपरिहार्य आपत्ति के कारण वहाँ जाना पड़े तो यथाशीघ्र वहाँ में लौट आना चाहिये। क्योंकि वहाँ भक्ष्याभक्ष्य का विचार नहीं, लोग मांस और मद्य का सेवन करते हैं, तथा पाखण्डी माधु और माध्वी वहाँ निवास करते हैं।

प्राचीन जैन ग्रन्थों में गंधार का उल्लेख आता है। बौद्ध सूत्रों में गंधार का उत्तगपथ का प्रथम जनपद बताया गया है।

तक्षशिला और पुष्करगवती गंधार देश की क्रम में पूर्वी और पश्चिमी राजधानियाँ थीं। जातक ग्रन्थों के अनुसार तक्षशिला समूचे भारत का विद्याकेन्द्र था, और यहाँ लाट, कुरु, मगध, शिवि आदि दूर-दूर देशों के विद्यार्थी पढ़ने आते थे। प्रसिद्ध वैयाकरण्य पाणिनी और प्रख्यात वैद्यराज जीवक ने यहीं विद्याभ्यास किया था।

जैन ग्रन्थों में तक्षशिला को बहली देश की राजधानी बताया गया है। जैन परम्परा के अनुसार, ऋषभदेव ने अयोध्या का राज्य भरत को और बहली का राज्य बाहुबलि को सौंपकर दीक्षा ग्रहण की थी। बाद में चलकर भरत और बाहुबलि दोनो में युद्ध हुआ और बाहुबलि ने भी दीक्षा ग्रहण कर ली।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

तक्षशिला का दूसरा नाम धर्मचक्रभूमिका था। यह नगरी बहुत समृद्ध थी, तथा यहाँ राजा अशोक अपने पुत्र कुणाल के साथ रहता था।

तक्षशिला की खुदाई में अनेक सिक्के, ताम्रपत्र तथा स्तूपों और बिहारों के ध्वंसावशेष उपलब्ध हुए हैं। तक्षशिला की पहचान पाकिस्तान में रावल-पिंडी ज़िले के शाहजी की ढेरी नामक स्थान से की जाती है।

माकेत के पश्चिम में धूणा (स्थाणुतीर्थ) जैन भ्रमणों के विहार की सीमा थी। इस नगर का सबंध पाण्डवों के इतिहास से है। हुआन-सांग के समय यहाँ अनेक बौद्ध स्तूप बने हुए थे।

स्थानेश्वर की पहचान मरस्वती और घाघरा के बीच कुरुक्षेत्र से की जाती है। मल्ला के धूणा से यह भिन्न है।

रोहीतक का उल्लेख महाभारत और दिव्यावदान में आता है। प्राचीन समय में रोहीतक समृद्धिशाली नगर था।

इसकी पहचान आधुनिक रोहतक से की जाती है।

अभयदेव के अनुसार सौवीर (सिन्धु) सिन्धु नदी के पास होने के कारण **सिन्धु-सौवीर** कहा जाता था, यद्यपि बौद्ध ग्रन्थों में सिन्धु और सौवीर को अलग-अलग प्रदेश मानकर रोकक को सौवीर की राजधानी बताया है। सिन्धु देश की नदियों में बाढ़ बहुत आती थी। दिगम्बर परम्परा के अनुसार रामिल्ल, न्धूलभद्र और भद्राचार्य ने उज्जयिनी में दुष्काल पड़ने पर सिन्धु देश में विहार किया था।

जैन ग्रन्थों में सिन्धु-सौवीर की राजधानी का नाम वीतिभय पट्टन बताया गया है। इस नगर का दूसरा नाम कुभारप्रक्षेप था। कहते हैं कि एक बार महर्षि उदयन किसी कुम्हार के घर ठहरे हुए थे। वहाँ उनके भावजे ने उन्हें विष दे दिया जिससे उनकी मृत्यु हो गई। इस पर देवताओं ने कुम्हार के घर को छोड़कर नगर में सर्वत्र धूल की घोर वर्षा की, अतएव इस नगर का नाम कुंभारप्रक्षेप पड़ा। महावीर द्वारा उदयन को दीक्षा दिये जाने का उल्लेख जैन ग्रन्थों में आता है। इस नगर में महावीर की चन्दन-निर्मित प्रतिमा थी,

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात-राजपूताना-मालवा-वुन्देलखंड

जिम्हें दर्शन के लिये लोग दूर-दूर से आते थे। फाहियान के समय यहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार था।

बीतिभयपट्टन भिण्वल्लि के अन्तर्गत था। भिण्वल्लि एक बड़ा विकट रेगिस्तान था, जहाँ लुधा-तृपा से पीड़ित यात्री लोगों को अक्सर प्राणा में हाथ धोना पड़ता था। संभवतः पाकिस्तान में मुजफ्फरगढ़ जिले के मनावन या मिनावन के आसपास का प्रदेश भिण्वल्लि कहा जाता हो।

बीतिभय की पहचान पाकिस्तान में शाहपुर जिले के भेरा नामक स्थान में की जा सकती है। इसका पुराना नाम भद्रवती बताया जाता है। यहाँ विष्णु नामक गाँव के पास बहुत सारे खडहर पाये गये हैं, जिनसे पता लगता है कि प्राचीन काल में यह स्थान बहुत उन्नत दशा में था।

२. काठियावाड़

मालूम होता है कि गुजरात और काठियावाड़ में शनैः-शनैः जैन धर्म का प्रसार हुआ। जैन ग्रन्थों में सौराष्ट्र (काठियावाड़) का उल्लेख मद्रागष्ट, द्रविड, आन्ध्र और कुडुक् (कुर्ग) देशों के साथ किया गया है, जहाँ परम धार्मिक सम्प्रति गत्ता ने अपने भ्राता का भेषकर जैन धर्म का प्रचार किया। आगे चलकर राजा कुमारपाल के समय गुजरात में जैनधर्म काफी फूला फला।

सौराष्ट्र की गणना जैनो के साढ़े पचास आर्य देशों में की गई है। जैन ग्रन्थों के अनुसार यहाँ कालकाचार्य डेगन के ६६ शाखा को लेकर आये थे। सौराष्ट्र व्यापार का बड़ा केन्द्र था।

द्वारवती सौराष्ट्र की मुख्य नगरी थी। इसका दूसरा नाम कुशस्थली था। द्वारका का वर्णन जैन सूत्रों में आता है। पहले कहा जाता था कि जगन्मथ के भय में यादव लोग मथुरा छोड़कर यहाँ आ बसे थे। जैन ग्रन्थों में द्वारका को आनर्त, कुशार्त, सौराष्ट्र और शुष्कराष्ट्र की राजधानी कहा है। द्रौपदीयन ऋषि द्वारा द्वारका के विनाश होने का उल्लेख ब्राह्मण और जैन ग्रन्थों में मिलता है। यहाँ कादवरी नाम की एक गुफा थी। उत्तर की द्वारका से यह भिन्न है।

कुछ लोग जूनागढ़ को ही प्राचीन द्वारका मानते हैं। आचल में यह स्थान वैष्णवों का परम धाम माना जाता है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

द्वारका* के उत्तर-पूर्व में रैवतक पर्वत था। इसका दूसरा नाम ऊर्जयन्त था। यहा नन्दनवन नाम का वन था, जिसमें सुगण्डि यक्ष का सुन्दर मन्दिर था। यह पर्वत अनेक पत्नी, लताओं आदि से शाबित था। यहाँ पानी के झरने थे, और लग प्रतिवर्ष उत्सव (मण्डि) मनान के लिए एकत्रित होते थे।

रैवतक पर्वत पर भगवान् अग्निनेमि ने मुक्तिलाभ किया, इसकी गणना सिद्धसेवों में की जाती है। यहाँ गुजरात के प्रसिद्ध जैन मन्त्री तेजपाल के बनवाए हुए अनेक मन्दिर हैं। गर्जामती (राजुल) ने यहाँ तप किया था, उसकी यहाँ गुफा बनी हुई है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार, यहाँ चन्द्रगुफा में आचार्य भस्मन ने तप किया था, और यही पर भूवर्धन और पुण्ड्रिक आचार्यों का अग्निष्ट श्रुतज्ञान को लिपिवद्ध करने का आदेश किया गया था। वैभार पर्वत के समान रैवतक भी क्रीडा का स्थल था।

रैवतक के दर्शन-शिर्ष का प्रदेश गिरिनगर या गिरिनार के नाम से प्रकाश जाता था। रैवतक की पहचान जनागढ़ के पास गिरिनार से की जाती है।

प्रभाम क्षेत्र को महाभारत में सर्वप्रधान तीर्थों में गिना है। इसे चन्द्र-प्रभाम, देवपाटन अथवा देवपट्टन भी कहते हैं। ब्राह्मणों का यह पवित्र धाम माना जाता है। चन्द्रग्रहण के समय यहाँ अनेक यात्री आते हैं। आवश्यक चूर्णों में प्रभाम को जैन तीर्थ माना गया है।

प्रभाम की पहचान आधुनिक भोमनाथ से की जाती है।

शत्रुघ्न जैन तीर्थों में आदितीर्थ माना जाता है। इसका दूसरा नाम पुण्डरीक है। जैन मान्यता के अनुसार यहाँ पञ्च पाण्डव तथा अन्य अनेक ऋषि-मनियों ने मुक्तिलाभ किया। राजा कुमारपाल के राज्य में लाखों रुपये लगाकर यहाँ के मन्दिरों का जीर्णोद्धार किया गया था। यहाँ पर छोटे-मोटे हजारों मन्दिर बने हुए हैं। इन मन्दिरों में कुछ ग्याह्वी शताब्दि के हैं, बाकी ईसवी सन १५०० के बाद के बने हुए हैं।

* पटना के दीवान बहादुर राधाकृष्ण चालान के सग्रह में एक जैन स्तूप सुरक्षित है जो मगधमग का बना है और द्वारका से लाया गया है।

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात-राजपूताना-मालवा-बुन्देलखंड

यह स्थान काठियावाड़ में पालिताना स्टेशन में दो मील के फासले पर है। यहाँ जैन यात्रियों के टहरने के लिए आर्लाशान भर्मशालाएँ बनी हुई हैं।

वलभी प्राचीन काल में भौगष्ट की राजधानी थी। ईसवी सन की छठी शताब्दि में यहाँ देवधिंगणि जमाश्रमण की अध्यक्षता में जैन आगमों की सङ्कलना के लिये अंतिम सम्मेलन हुआ था। देवधिंगणि की यहाँ मूर्ति स्थापित है।

हुअन-सांग के समय यहाँ अनेक बौद्ध विद्वान मौजूद थे। नालन्दा के समान वलभी भी बौद्ध विद्या का केन्द्र था। यहाँ अनेक प्राचीन सिक्के और ताम्रपत्र उपलब्ध हुए हैं।

वलभी की पहचान भावनगर में उत्तर-पूर्व में १८ मील पर बला नामक स्थान में की जाती है।

हथकण्ठ नगर का उल्लेख जैन सूत्रों में आता है। पञ्च पाटवा का यहाँ आगमन हुआ था। पाटवचरित के अनुसार, यह नगर खेतक पर्वत में बागद योजन की दूरी पर था। शिलालेखों में हस्तकवप्र का उल्लेख आता है।

इस नगर की पहचान भावनगर गिर्यामत के टायव नामक स्थान में की जाती है।

महुवा बन्दर भावनगर गिर्यामत में है। इसका दूसरा नाम मधुमती था। पार्श्वनाथ का यह अतिशय क्षेत्र माना जाता है।

३ गुजरात

जैन और बौद्ध ग्रन्थों में लाट देश का उल्लेख आता है, यद्यपि इसका गणना पृथक् रूप से आर्य देशों में नहीं की गई। वपाकृतु में यहाँ गिरियज नामक उत्सव, तथा श्रावण सुदी पूर्णिमा के दिन इन्द्र का उत्सव मनाया जाता था। इस देश में वर्षा में खेती होती थी, और यहाँ ग्यार पानी के कुएँ थे।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

भृगुकच्छ लाट की राजधानी थी। यह नगर भृगुपुर नाम से भी प्रसिद्ध था। बौद्ध जातका में भृगुकच्छ का उल्लेख आता है। यहाँ कुरङलमेण्ट नामक व्यतर देव की स्मृति में उत्सव मनाया जाता था। भूततडाग नाम का यहाँ बड़ा तालाब था। आचार्य वज्रभूति ने भृगुकच्छ में विहार किया था। भृगुकच्छ और उज्जैनी के बीच पक्कीम योजन का अन्तर था।

भृगुकच्छ व्यापार का बड़ा केन्द्र था। यहाँ जल और स्थल दोनों मार्गों से व्यापार होता था। ईसवी सन की प्रथम शताब्दि में यहाँ काबुल से माल आता था।

भृगुकच्छ की पहचान आधुनिक मडौन में की जाती है। आजकल यह मुनिमुवतनाथ का तीर्थ माना जाता है। अश्ववाध नामक तीर्थ यहाँ से लगभग छह कोस है।

आनन्दपुर का पुराना नाम आनर्तपुर है। इसे नगर भी कहा जाता था। राजा ध्रुवसेन द्वितीय की यह राजधानी थी। जैन परम्परा के अनुसार यहाँ सर्वप्रथम कलामूर्ति की वाचना हुई थी। आनन्दपुर ब्राह्मणा का केन्द्र था। जैन श्रमण यहाँ से मथुरा के लिए विहार करते थे।

आनन्दपुर व्यापार का बड़ा केन्द्र था। यहाँ स्थल मार्ग से माल आता-जाता था। यहाँ के निवासी सरस्वती नदी के किनारे उत्सव मनाते थे।

आनन्दपुर की पहचान उत्तर गुजरात के वडनगर स्थान में की जाती है।

महिरगा का उल्लेख सूत्रकृतांग चूर्णि में आता है। यहा मिद्धसेन आचार्य ने विहार किया था। प्राचीन शिलालेखों में इस नगरी का नाम आता है। मोह वर्णिका की उत्पत्ति का यह स्थान है। हेमचन्द्राचार्य माट जाति में ही उत्पन्न हुए थे।

यह स्थान पाटन से लगभग १८ मील की दूरी पर है। यहाँ सूर्य का मन्दिर है।

तारङ्गागिरि से वराग, मागरदत्त, वरदत्त आदि साढ़े तीन करोड़ मुनियों ने मोक्ष जाने का उल्लेख जैन ग्रन्थों में आता है। यहाँ मिद्धशिला नाम की पहाड़ी है। पहाड़ के ऊपर आचार्य हेमचन्द्र के उपदेश में सम्राट कुमारपाल

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात-राजपूताना-मालवा-बुन्देलखंड

द्वारा प्रतिष्ठित विशाल मन्दिर है जिसके निर्माण में लाखों रुपये लगे थे। प्रभावकचरित में इस तीर्थ की उत्पत्ति दी हुई है।

म्हैमाणा में तारगा हिल की गेल जाती है। तारगा रिल स्टेशन से तीन चार मील के फासले पर है।

पावागिरि सिद्धलेश्वरी में गिना जाता है। यहाँ में रामचन्द्र जी के पुत्र लव और कुश आदि पाँच कंगड़ मनियों के मोक्ष पाने का उल्लेख मिलता है। यह तीर्थ शत्रुजय की चोट का माना जाता है। पावकगढ़ का उल्लेख शिला-लेखा में पाया जाता है। यह स्थान ताम्रवर्षी राजाओं के अधिकार में था।

यहाँ लाखों रुपये की लागत के दिगम्बर जैन मन्दिर बने हुए हैं। पहले यह तीर्थ श्वताम्बर का था। यहाँ सुप्रसिद्ध मन्त्रा नेत्रमाल ने सर्वोत्तम नाम का विशाल मन्दिर बनवाया था। मात्र मुदी १३ में यहाँ तीन दिन तक मला जाता है।

यह स्थान बटौरा में अष्टाईस मील के फासले पर चौपानेर के पास है।

स्तम्भ तीर्थ की कथा सामधर्मगण की उपदेशमत्तिका में आती है। चिन्तामणि पार्श्वनाथ का यहाँ प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ अग्रथदेव मूर्ति ने विहार किया था।

स्तम्भ तीर्थ की पहचान आधुनिक स्वभाव से की जाती है।

४ : राजपूताना

राजपूताने का मरुभूमि कहा जाता था। यहाँ शनैः-शनैः जैन धर्म का प्रसार हुआ।

मत्स्य देश का उल्लेख महाभारत में आता है। इस देश की गणना जैनो के साढ़े पचास आय देशों में की गई है।

मत्स्य देश की पहचान आधुनिक अन्वय रियासत में की जाती है।

वैराट या विराटनगर मत्स्य की राजधानी थी। बनवास के समय यहाँ पांडवों ने गुप्तवास किया था। यहाँ अशोक के शिलालेख पाये गये हैं। चीनी

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

यात्री हुअन-सांग यहाँ आया था। वैराट में बौद्ध मठों के भवभावशेष उपलब्ध हुए हैं।

यहाँ के लोग वीरता के लिए प्रसिद्ध थे। आइने-अकबरी में वैराट का उल्लेख आता है। अकबर बादशाह ने इस नगर को फिर में बसाया था। यहाँ ताँबे की बहुत सी म्याने थी।

वैराट की पहचान जयपुर गिरामत के वैराट नामक स्थान से की जाती है।

राजपूताने का दूसरा प्राचीन स्थान पुकर था। आवश्यक चूर्णि में इसका तीर्थक्षेत्र बताया है। उज्जयिनी के राजा चटप्रयात के समय यह स्थान विद्यमान था।

यहाँ पुकर तालाब में स्नान करने के लिये आजकल भी अनेक यात्री आते हैं। यहाँ अनेक उत्तम घाट, धर्मशालाएँ और मन्दिर बने हुए हैं।

पुकर अजमेर से लगभग ६ मील की दूरी पर है।

भिल्लमाल या श्रीमाल में आचार्य वज्रस्वामी ने विहार किया था। यहाँ द्रुम नाम का चोटी का मिट्टा चलता था। छठी शताब्दि में लेकर नौवीं शताब्दि तक यह स्थान श्रीमाल गुर्जर की राजधानी थी। श्रीमाल उपमिति-भवप्रपञ्चकथा के कर्ता मिद्वर्षि और माघ कवि की जन्मभूमि थी।

भिल्लमाल की पहचान जोधपुर गिरामत में तसवन्तपुर के पास भिलमाल नामक स्थान से की जाती है।

अर्चद जैनो का प्राचीन तीर्थ है। यहाँ ऋषभनाथ और नेमिनाथ के विश्व-विख्यात मन्दिर हैं, जिन्हें लाखों रुपये खर्च करके बनवाया गया था। इनमें से एक १०३२ ई० में विमलशाह का बनवाया हुआ है और दूसरा १२३२ ई० में तेजपाल का बनवाया हुआ है। दाना ही शिखर तक सगमरमर के बने हैं। जिनप्रभसूरी के समय यहाँ श्रीमाता, अचलेश्वर, वशिष्ठाश्रम आदि अनेक लौकिक तीर्थ विद्यमान थे। बृहत्कल्पभाष्य में अर्चद और प्रभास तीर्थों पर उत्सव (सम्बडि) मनाये जाने का उल्लेख आता है।

अर्चद की पहचान भिराही राज्य के अन्तर्गत आठ पहाड़ से की जाती है।

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात-राजपूताना-मालवा बुन्देलखंड

इसकी गणना शत्रुजय, सम्मोदशिखर गिरनाग और चन्द्रगिरि नामक तीर्थों के साथ की गई है।

माध्यमिका (मज्जमिया) नाम की जैन श्रमणों की शाखा का उल्लेख कल्पसूत्र में मिलता है। यहाँ प्राचीन शिलालेख, मिकके एवं बौद्ध स्तूपों के अवशेष उपलब्ध हैं।

माध्यमिका की पहचान दक्षिण राजपूताने में निचौड के पास नगरी नामक स्थान में की जाती है।

उदयपुर में धुलेवा की अथवा केसरियारजी जैन तीर्थ माना जाता है। यहाँ फाल्गुन बड़ी ८ को बड़ा मेला लगता है, और भगवान पर भना केसर चढ़ाई जाती है। गील आदि जानिया का इस तीर्थ का प्रतीक है।

विजोलिया उदयपुर में लगभग ११२ मील है। इसका पुराना नाम विन्ध्यावलि था। यहाँ पार्श्वनाथ का मन्दिर है।

चौबपुर में मेड़ता गड लाटन पर मेड़ता गड चक्कन के पास फनावा नाम का तीर्थ है। इस तीर्थ की कथा उपदेशसप्तिका में आती है। यहाँ आचार्य देवसूरी का आगमन हुआ था। यहाँ पार्श्वनाथ की अट्ठारह हाथ लकी मूर्ति है।

विक्रम की १३-१६ शताब्दि में राणकपुर एक उन्नत और महान नगर था। यहाँ धनाशा और रतनाशा नाम के दो भाइयों ने लाखों रुपया खर्च करके मन्दिरों का निर्माण किया था। मेवाड के महाराणा कुम्भा राणा के समय विक्रम संवत् १४३४ में इस तीर्थ के निर्माण का कार्य जारी था। आज कल यह तीर्थ माग्वाड और मेवाड की सधि पर विद्यमान है।

५. मालवा

मालवा की गणना प्राचीन जनपदों में की गई है। यह देश जैन श्रमणों का केन्द्र था, और अर्वाक्षिपति राजा सम्प्रति ने यहाँ जैन धर्म की प्रभावना

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

की थी। यहाँ के बौदिकों का उल्लेख महामाग्न तथा जैन ग्रन्थों में आता है। ये लोग उज्जयिनी निवासियों को भगाकर ले जाते थे। चीनी यात्री हुआन-सांग के समय मालवा विद्या का केन्द्र था और यहाँ अनेक मठ बने हुए थे।

अवन्ति मालवा की राजधानी थी। यह दक्षिणापथ की मुख्य नगरी थी। अवन्ति का उल्लेख बौद्ध सूत्रों में आता है। ईसवी सन की सातवीं-आठवीं सदी के पहले मालव अवन्ति के नाम से प्रख्यात था। यहाँ की मिट्टी काली होती थी, अतएव यहाँ बौद्ध साधुओं को जूते पहनने और स्नान करने की अनुमति प्राप्त थी।

अवन्ति की पहचान मालवा, निमार और मध्यप्रदेश के कुछ हिस्सों में की जानी है।

अवन्ति के पूर्व में उससे सटा हुआ आकर देश था। आकर की राजधानी विदिशा थी। आगे चलकर अवन्ति और आकर क्रम से पश्चिमी और पूर्वी मालवा कहलाने लगे।

उज्जयिनी उत्तर अवन्ति की राजधानी थी। राजा चण्डप्रभोत यहाँ राज्य करता था। कुछ समय पश्चात् सम्राट् अशोक का पुत्र कुणाल यहाँ का सूबेदार हुआ। उज्जयिनी का दूसरा नाम कुणालनगर बताया गया है। कुणाल के बाद राजा नम्रपति का राज्य हुआ। यहाँ जीवन्तस्वामी प्रतिमा के दर्शन के लिये आर्य मुर्खित का आगमन हुआ था। यहाँ आचार्य चण्डकूट, भद्रकगुप्त, आर्यगन्धित, आयथापाद आदि मुनियों ने भी विहार किया था। दिगम्बर जैन परम्परा के अनुसार चन्द्रगुप्त सम्राट् ने यहाँ भद्रबाहु से दीक्षा ग्रहण कर दक्षिण की यात्रा की थी। श्वेताम्बर जैन परम्परा के अनुसार यहाँ कालकाचार्य ने राजा गर्दभिलच को भिहासन से उतार कर उसके स्थान पर ईशान के शाहों को बैठाया था। बाद में राजा विक्रमादित्य ने अपना राज्य स्थापित किया। भिद्वसन दिवाकर विक्रमादित्य की सभा के एक रत्न माने जाते थे।

उज्जयिनी विशाला और पुष्पकरडिनी नाम से भी प्रख्यात थी। किसी समय यहाँ बौद्धों का जोग था और यहाँ अनेक बौद्ध मठ बने हुए थे। यहाँ

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात-राजपूताना-मालवा-बुन्देलखण्ड

के लोग मयपान के शौकीन होते थे। उज्जयिनी व्यापार का बड़ा केन्द्र था।

उज्जयिनी में महाकाल नाम का प्राचीन मन्दिर था, जिसका उल्लेख कालिदास ने मेघदूत में किया है। यह मन्दिर आजकल महाकालेश्वर के नाम से प्रख्यात है।

दक्षिण अरवन्ति की राजधानी माहिष्मती थी। किसी समय यह बहुत समृद्धावस्था में थी। बौद्ध ग्रन्थों में इसे महेश्वरपुर कहा गया है।

माहिष्मती की पहचान नर्मदा के दाहिने किनारे पर महिष्मति अथवा महेश नामक स्थान से की जाती है। यह स्थान इन्दौर से पतालीस मील की दूरी पर है।

दशार्ण का नाम जैन आर्य क्षेत्रों में आता है। दशार्ण का उल्लेख महाभारत और मेघदूत में भी मिलता है। यहाँ की तलवारे बहुत अच्छी होती थी। भिलसा के आसपास के प्रदेश को दशार्ण माना जाता है।

मृत्तिकावती दशार्ण की राजधानी थी। यह नगरी नर्मदा के किनारे थी। ब्राह्मणों की हग्विश पुराण में इसका उल्लेख मिलता है।

मेघदूत में विदिशा को दशार्ण की राजधानी कहा गया है। यहाँ महावीर की चण्डन-निर्मित मूर्ति थी। आचार्य महागिरि तथा मुहस्ति ने यहाँ विहार किया था। मरुत के शिलालेखों में विदिशा का उल्लेख मिलता है। यहाँ बहुत से पुराने स्तूपों के अवशेष उपलब्ध हुए हैं। विदिशा वेत्तवती (बेतवा) के किनारे पर थी, और यहाँ के वस्त्र बहुत अच्छे होते थे।

विदिशा की पहचान आधुनिक भिलसा से की जाती है।

दशार्णपुर दशार्ण का दूसरा प्रसिद्ध नगर था। जैन अनुश्रुति के अनुसार इसका दूसरा नाम एउकाक्षपुर था। बौद्ध ग्रन्थों में इसे एरकच्छ नाम से कहा गया है। यह नगर वत्थगा (बेतवा) नदी के किनारे था, और व्यापार का बड़ा केन्द्र था।

दशार्णपुर की पहचान भोपी जिले के एरछ नामक स्थान से की जा सकती है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

दशार्णपुर के उत्तर-पूर्व में दशार्णकूट नाम का पर्वत था। इसका दूसरा नाम गजाम्रपद अथवा इन्द्रपद भी था। पर्वत चारों तरफ गॉवों से घिरा था। जैन सूत्रों के अनुसार यहाँ महावीर ने राजा दशार्णभद्र को दीक्षा दी थी। आचार्य महागिरि ने यहाँ तपश्चरण किया था। आवश्यक चूर्णि में दशार्णकूट का वर्णन आता है।

दशार्ण का दूसरा नगर दशपुर था। जैन श्रमणों ने इस नगर को अपने विहार से पवित्र किया था। आचार्य आर्यरक्षित की यह जन्मभूमि थी। दशपुर में जीवन्तस्वामी प्रतिमा होने का उल्लेख आता है। यहाँ सातवे निहव की स्थापना हुई थी।

दशपुर की पहचान आधुनिक मदसौर से की जाती है।

विदिशा के पाम कुजरावर्त और रथावर्त नाम के पर्वत थे; दोनों पाम-पाम थे। जैन परम्परा के अनुसार कुजरावर्त पर्वत पर आर्य वज्रस्वामी ने निर्वाण पाया था। इस पर्वत का उल्लेख रामायण में आता है।

रथावर्त पर्वत पर आर्य वज्रस्वामी पाँच सौ श्रमणों के साथ आये थे। इस पर्वत का उल्लेख महाभारत में आता है।

बडवानी दिगम्बरो का तीर्थ है। दिगम्बर परंपरा के अनुसार यहाँ से दक्षिण की ओर चूलगिरि शिखर से इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण आदि मुनि मोक्ष पधारे। इसे बावनगजा भी कहते हैं।

यह स्थान मऊ स्टेशन से लगभग ६० मील की दूरी पर है।

मकमी पार्श्वनाथ उज्जैन से बारह कोस है।

मिठवरकूट रेवा नदी के तट पर है। यहाँ से साढ़े तीन करोड़ मुनियों का मोक्ष जाना बताया जाता है। यहाँ हर वर्ष मेला भरता है।

यह स्थान बडवाह (इन्दौर) से छह मील की दूरी पर है। यह क्षेत्र काफी प्रवाचीन मालूम होता है।

इन्दौर के पाम ऊन नामक स्थान को पावागिरि (द्वितीय) कहा जाता

पंजाब-सिन्ध-काठियावाड़-गुजरात-राजपूताना-मालवा-बुन्देलखण्ड

है। कहते हैं यहाँ मे सुवर्णभद्र आदि मुनि मोक्ष पधारे। यह तीर्थ भी अर्वा-चीन मालूम होता है।

बुन्देलखण्ड

चेदि जनपद की गणना जैनों के आर्य क्षेत्रों में की गई है। प्राचीन काल में यहाँ राजा शिशुपाल राज्य करता था। चेदि बौद्ध श्रमणों का केन्द्र था।

बुन्देलखण्ड के उत्तरी भाग को प्राचीन चेदि माना जाता है।

शुक्तिमती चेदि देश की राजधानी थी। शुक्तिमती का उल्लेख महा-भारत में मिलता है। सुत्तिवइया नामक जैन श्रमणों की शाखा थी।

बौदा जिले के इर्दगिर्द के प्रदेश को शुक्तिमती माना जाता है।

आरम्भ में मध्यप्रदेश में जैनधर्म का प्रचार बहुत कम था, लेकिन मालूम होता है आगे चल कर यहाँ बहुत से जैन तीर्थों का निर्माण हो गया।

बुन्देलखण्ड के द्राणगिरि, नैनागिरि और सानागिरि को मित्रक्षेत्र माना जाता है।

बुन्देलखण्ड की बिजावर गिरामत के मेढपा गाँव के मर्मप का पर्वत द्राण-गिरि माना जाता है। यहाँ से गुरुदत्त आदि मुनियों का मोक्षगमन बताया है। यहाँ चौबीस मन्दिर हैं, वार्षिक मेला भरता है।

नैनागिरि क्षेत्र को रेमिन्दीगिरि बतलाया जाता है। कहते हैं यहाँ से वरदत्त आदि मुनियों ने मोक्ष लाभ किया। यह स्थान सागर जिले की ईशान सीमा के पाम पन्ना गिरामत में है। यहाँ वार्षिक मेला लगता है।

सोनागिरि में दो-चार को छोड़ कर शेष मन्दिर सौ सवा-सौ वर्ष के भीतर के जान पड़ते हैं। यह स्थान ग्वालियर के पाम दतिया से पाँच मील है।

कुडलपुर, खजुराहा, थोवनजी, पपौग, देवगढ़, चन्देरी, अहारजी आदि अतिशय क्षेत्र माने जाते हैं।

कुण्डलपुर दमोड़ से बीस मील ईशान कोण में है। मुख्य मन्दिर महावीर का है, और यहाँ महावीर जयन्ती का मेला भरता है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

किमी समय खजुराहा बुन्देलखण्ड की राजधानी थी। शिलालेखों में इसका नाम खज्जुरवाहक आता है। हुआन-सांग ने इसका वर्णन किया है। यह नगर चन्देलवंश के राजाओं के समय चरमोन्नति पर था। यहाँ कंगोडा रुपये की लागत के जैन मन्दिर बने हुए हैं, जो ईसवी सन् ९५० से लेकर १०५० तक के हैं। खजुराहा में अनेक खण्डित जैन मूर्तियाँ उपलब्ध हुई हैं। यहाँ का मन्दिर-समूह इस काल की कला का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है।

देवगढ़ जायवलौन स्टेशन से लगभग आठ मील की दूरी पर है। यहाँ लाखों रुपये की लागत के जैन मन्दिर बने हुए हैं। यहाँ गुप्तकाल के लेख मौजूद हैं। यहाँ की शिल्पकला बहुत सुन्दर है। देवगढ़ को उत्तर भारत की जैनवर्दी कहा जाता है।

चन्देरी ललितपुर से बीस मील दूर है। यहाँ अत्यन्त मनोज्ञ जैन मन्दिर बने हुए हैं।

थावनजी चन्देरी से नौ मील के फासले पर है।

पषौगर्जा क्षेत्र टीकमगढ़ से तीन मील है।

अहारजी में सुन्दर जैन मूर्तियाँ हैं। यह स्थान टीकमगढ़ से पूर्व की ओर बारह मील है।

दक्षिण

बगर हैदराबाद-महाराष्ट्र-कोंकण-आन्ध्र-द्रविड-कर्णाटक-
कुर्ग आदि

मध्यदेश में जैसे-जैसे जैन श्रमणों ने दक्षिण की ओर विहार किया, दक्षिण में शनैः-शनैः जैनधर्म का प्रसार होता गया। जैनों के माढ़े पश्चिम आर्या क्षेत्रों में दक्षिण के देशों के नाम नहीं, इससे मालूम होता है कि आरम्भ में दक्षिण में जैनधर्म नहीं पहुँचा था। लेकिन धीरे-धीरे राजा सम्प्रति ने दक्षिणपथ को जीतकर उसके सामंत राजाओं को अपने वश में किया, और आगे चलकर आन्ध्र, द्रविड, कुडुक्क (कुर्ग) आदि देशों में जैनधर्म फैलाया। परिणाम यह हुआ कि दक्षिण में जैन उपनिषदों की संख्या बढ़ने लगी, और यहाँ जैन श्रमणों का सम्मान होने लगा। आगे चलकर तो दक्षिण में कुडुक्क आचार्य और गोल्ल आचार्य जैसे दिग्गज आचार्यों का तथा द्रविड सघ, पुन्नट सघ आदि सघों का जन्म हुआ, एक से एक सुन्दर तीर्थों की स्थापना हुई, और दिग्गज जैनों का यह केन्द्र बन गया।

१ : बरार

विदर्भ का उल्लेख महाभारत में आता है। यहाँ राजा नल राज्य करता था।

यह देश आन्तक दक्षिण कोशल, माडवाना या बगर के नाम से पुकारा जाता है।

कुण्डिननगर विदर्भ का मुख्य नगर था। इसका उल्लेख बृहदारण्यक उपनिषद् और महाभारत में आता है।

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

यह स्थान आजकल अमरावती के चादूर तालुका में है। यहाँ जैन मन्दिर है।

अचलपुर (एलिचपुर) विदर्भ देश का दूसरा मुख्य नगर था। इसके पास कृष्णा (कन्हन) और बेन्या (बेन) नदियाँ बहती थी। इन नदियों के बीच ब्रह्मद्वीप नाम का द्वीप था। यहाँ बहुत से तपस्वी रहते थे। ब्रह्मद्वीपिका नाम की जैन श्रमणा की शाखा का उल्लेख कल्पसूत्र में मिलता है, इससे मालूम होता है कि यह स्थान जैनधर्म का केन्द्र रहा होगा। अचलपुर का उल्लेख आचार्य हेमचन्द्र ने अपने प्राकृत व्याकरण में किया है।

मुक्तागिरि निर्वाणक्षेत्र माना जाता है। १८वीं सदी के यात्रियों ने इसे शत्रुञ्जय के तुल्य तीर्थ बताते हुए यहाँ चौबीस तीर्थङ्करों के उत्तुङ्ग प्रामादों का उल्लेख किया है।

यह स्थान एलिचपुर में बारह मील दूर है। यहाँ के अधिकांश मन्दिर १६वीं सदी के बने हुए हैं।

अन्तर्गीत पार्श्वनाथ की कथा उपदेशमयनिका में आती है। यहाँ श्रीपाल का कुछ दूर हुआ था।

यह स्थान आकोना में लगभग उन्नीस कोस दूर शिरपुर ग्राम के पास है।

भातकुली अतिशय क्षेत्र माना जाता है। यह स्थान अमरावती में दस मील के फाँले पर है। पार्श्वनाथ की यहाँ मूर्ति है।

२ : हैदराबाद

तमरा आभीर देश की सुन्दर नगरी थी। आभीर देश जैन श्रमणों का केन्द्र था। यहाँ आर्य समित और वज्रस्वामी ने विहार किया था। तमरा में गढाचार्य का आगमन हुआ था। करकण्डुअचरिय में इस नगर का इतिहास दिया हुआ है।

तमरा की पड़चान उसमानाबाद जिले के तेरा नामक स्थान से की जाती है।

बरा-हैदराबाद-महाराष्ट्र-कोंकण-आन्ध्र-द्रविड-कर्णाटक-कुर्ग आदि

तगरा से आठ मील पर धाराशिव है। आराधना कथाकोष में तेर नगर और धाराशिव का वर्णन आता है। यहाँ बहुत सी गुफाएँ हैं, जिन्हे राजा करकण्डू ने बनवाया था।

आजकल इस स्थान को उममानावाद कहते हैं।

कुल्याक की गणना प्राचीन तीर्थों में की जाती है। यह क्षेत्र आदिनाथ का प्राचीन तीर्थ माना जाता है। उपदेशसप्तिका में कुल्याक की कथा आती है। यहाँ आदिनाथ की प्रतिमा माणिक्यदेव के नाम से प्रख्यात है।

यह तीर्थ निजाम स्टेट में सिकन्दरावाद के पास है।

अजन्ता और एलोरा नाम की प्राचीन गुफाएँ भी इसी रियासत में हैं। अजन्ता की गुफाओं में बौद्ध जातकों के अनेक दृश्य अंकित हैं। ये गुफाएँ ईसा के पूर्व दूसरी शताब्दि से लेकर ईसवी मन् की छठी शताब्दि तक की मानी जाती हैं। एलोरा का प्राचीन नाम इलापुर है। यहाँ एक समूची पहाड़ी काटकर मन्दिरों में परिवर्तित कर दी गई है, जिनमें चूने-मसाले व कील-काँटों का नाम नहीं। यह स्थान किसी जमाने में मान्यखेट के राष्ट्रकूट राजाओं की राजधानी था। यहाँ ब्राह्मण, बौद्ध और जैनों के मन्दिर बने हुए हैं, जिनका समय द्वी शताब्दि है।

ऊखलद अतिशय क्षेत्र माना जाता है। यहाँ नेमिनाथ का मन्दिर है, प्रतिवर्ष माघ का मेला लगता है।

यह स्थान निजाम स्टेट रेलवे के मीरखेल स्टेशन से तीन-चार मील है।

आष्टे हैदराबाद रियासत में दुधनी स्टेशन के पास है। यहाँ जैन चैत्यालय बना हुआ है।

कुथलगिरि की गणना सिद्धक्षेत्रों में की जाती है। यहाँ से कुलभूषण और देशभूषण मुनियों का मोक्षगमन बताया जाता है।

यह स्थान वार्मी टाउन रेलवे स्टेशन से लगभग बीस मील है।

दहीगाँव महावीर का अतिशय क्षेत्र माना जाता है। यह स्थान शोला-

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

पुर जिले में दिकमाल स्टेशन में लगभग बाईस मील है ।

स्वर्वाभि कोल्हापुर रियामत में, कोल्हापुर शहर में लगभग तीस मील है ।

श्रीक्षेत्रकुम्भान कोल्हापुर रियामत में हातकलगणा स्टेशन में लगभग चार मील है । गाँव में एक मन्दिर है ।

३ : महाराष्ट्र

महाराष्ट्र के अनेक गीति-गिवाजों का उल्लेख जैन छेदग्रन्थों की टीका-टिप्पणियों में मिलता है । राजा सम्प्रति ने इस देश में जैनधर्म का प्रचार किया था । लेकिन आगे चलकर मालूम होता है कि यह प्रदेश जैनधर्म का स्वामी केन्द्र बन गया था ।

प्रतिष्ठान या पोतनपुर महाराष्ट्र की राजधानी थी । बौद्ध ग्रन्थों में पोतन या पोतलि को अश्मक देश की राजधानी कहा है ।

प्रतिष्ठान महाराष्ट्र का भूषण माना जाता था । यह नगर विद्या का केन्द्र था । यहाँ श्रमण-पूजा नाम का बड़ा भारी उत्सव मनाया जाता था । जैन ग्रन्थों से पता लगता है कि यहाँ पादलिप्त सूरि ने पद्मदान के राजा की शिरो-वेदना दूर की थी । कालकाचार्य ने यहाँ विहार किया था । कहते हैं कि एक बार कालकाचार्य उज्जयिनी से यहाँ पधारे और मानवाहन (शालिवाहन) के आग्रह पर इन्द्र महोत्सव के कारण पर्युपण पर्व की तिथि बदल कर पचमी से चतुर्थी कर दी । जैन ग्रन्थों में प्रतिष्ठान को भद्रबाहु (द्वितीय) और वराह-मिहिर का जन्म-स्थान माना गया है ।

जिनप्रभ सूरि के समय यहाँ अटमठ लौकिक तीर्थ थे । प्रतिष्ठान व्यापार का बड़ा केन्द्र था ।

इसकी पहचान औरङ्गाबाद जिले के पैठन नामक स्थान से की जाती है ।

४ : कोंकण

कोंकण देश में जैन श्रमणा ने विहार किया था । यह देश परशुराम क्षेत्र के नाम से भी पुकारा जाता था । अत्यधिक वर्षा होने के कारण जैन

बरार-हैदराबाद-महाराष्ट्र-कोंकण-आन्ध्र-द्रविड-कर्णाटक-कुर्ग आदि

साधु यहाँ छतरी लगा सकते थे। यहाँ के लोग फल-फूल के बहुत शौकीन होते थे। यहाँ गिरियञ्च नाम का उत्सव मनाया जाता था। कोंकण की अष्टवी का उल्लेख जैन ग्रन्थों में आता है। मच्छर यहाँ बहुत होते थे। यहाँ यूनान के व्यापारी व्यापार के लिए आते थे।

पश्चिमी घाट और समुद्र के बीच के हिस्से को कोंकण कहा जाता है।

कोंकण की राजधानी शूर्पारक थी। इस नगर का उल्लेख महाभारत में मिलता है। पंच पाण्डव प्रभास जाते हुए यहाँ ठहरे थे। आचार्य वज्रसेन, आर्य समुद्र और आर्य मगु ने यहाँ विहार किया था। यहाँ बहुत से व्यापारी रहते थे और भृगुकच्छ तथा सुवर्णभूमि तक व्यापार के लिए जाते थे।

शूर्पारक की पहचान बम्बई इलाके के ठाणा जिले में सोपारा स्थान से की जाती है। आजकल यहाँ बड़ी हाट लगती है।

नासिकपुर (नासिक) कोंकण का दूसरा प्रसिद्ध नगर था। यह स्थान गोदावरी के किनारे है और ब्राह्मणों का परम धाम माना जाता है।

यहाँ पर दण्डकारण्य था, जहाँ रामचन्द्र जी आकर रहे थे। जैन ग्रन्थों में इसका दूसरा नाम कुमकारकृत बताया गया है। इस नगर के नाश होने की कथा रामायण, जातक तथा निशीथचूर्णि में आती है।

तु गिरि पर्वत पर राम बलभद्र के मोक्ष होने का उल्लेख प्राचीन जैन ग्रन्थों में आता है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार यहाँ से राम, हनुमान, सुग्रीव आदि नित्यानवे क्लेष्टि मुनि मोक्ष पधारे।

यह क्षेत्र मनमाड स्टेशन से साठ मील दूर है। आजकल इसे मोंगी-तुंगी कहते हैं।

नासिक से पॉन्-छह मील के फामले पर गजपथा नामक तीर्थ है। यहाँ से सात बलभद्र और यादव आदि मुनियों का मोक्ष होना बताया जाता है, लेकिन यह क्षेत्र काफी अर्वाचीन ज्ञान पड़ता है।

५ : आन्ध्र

आन्ध्र देश में राजा सम्प्रति ने जैन धर्म का प्रचार किया था। बौद्ध

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

जातकों में आन्ध्र की राजधानी का नाम अन्धपुर बताया गया है। अन्धपुर नगर का उल्लेख जैन ग्रन्थों में आता है। यह नगर तेलवाह नदी पर था।

महागुप्त के पूर्व-दक्षिण तेलुगु भाषा का समूचा क्षेत्र आन्ध्र या तेलगण देश कहा जाता है।

वनवागी नगरी का उल्लेख ब्राह्मणों की हरिवंश पुराण में आता है। जैन ग्रन्थों के अनुसार यहाँ मसय और भसय नामक राजकुमारों ने अपनी बहन सुकुमालिया के साथ जैन दीक्षा ली थी।

छठी शताब्दि तक यह नगर कदवों की राजधानी रही। आजकल यह स्थान उत्तर कनाडा में सिरमी ताल्लुका में वरदा नदी के बाँये किनारे इमी नाम से मौजूद है। यहाँ प्राचीन अभिलेख मिले हैं।

६ : गोल्ल

गोल्ल देश के अनेक गीति-रिवाजों का उल्लेख जैन चूर्णि ग्रन्थों में मिलता है। जैन अनुश्रुति के अनुसार चन्द्रगुप्त का मंत्री चाणक्य यहीं का रहने वाला था। गोल्लान्ध्या का उल्लेख श्रवणबेलगोला के शिलालेखों में आता है।

इस देश की पहचान गुन्दूर जिले की गल्लरु नामक नदी पर गोलि स्थान में की जा सकती है। यहाँ बहुत से शिलालेख उपलब्ध हुए हैं, इससे भी इस स्थान की प्राचीनता प्रकट होती है।

७ : द्रविड़

द्रविड़ (दमिल) तमिल का संस्कृत रूप है। द्रविड़ में पहले चोल, चेर और पाण्ड्य देश गर्भित थे। हुअन-साँग के समय द्रविड़ के उत्तर में कोंकण और धनकटक तथा दक्षिण में मालकट था। जैन ग्रन्थों से पता लगता है कि आरम्भ में यहाँ जैन साधुओं की वसति (उपाश्रय) आदि का कष्ट होता था।

कांचीपुर द्रविड़ की राजधानी थी। बृहत्कल्पभाष्य से पता लगता है कि यहाँ नेल्ल नाम का सिक्का चलता था। यहाँ के दो नेल्ल कुमुमपुर (पटना)

बराबर-है-दराबाद-महाराष्ट्र-कोंकण-आन्ध्र-द्रविड-कर्णाटक-कुर्ग आदि

के एक नेलक के बराबर होते थे। हुआन-सांग के समय यह नगर बौद्धों का केन्द्र था। स्वामी समतभद्र की यह जन्मभूमि थी। आठवीं शताब्दि में जैनों का यहाँ बहुत प्रभाव था। काँचीपुर चोल की राजधानी रही।

काँचीपुर की पहचान मद्रास सूबे के काँजीवर नामक स्थान से की जाती है।

८ : कर्णाटक

कर्णाटक का पुराना नाम कुन्तल है। महाराष्ट्र के दक्षिण में कनाड़ी भाषा का क्षेत्र कर्णाटक कहा जाता है। इसमें कुर्ग, मैसूर आदि प्रदेश सम्मिलित थे।

जैन ग्रन्थों में कुडुक्क देश का अनेक जगह उल्लेख आता है। राजा सम्प्रति के समय से इस देश में जैन धर्म का प्रचार हुआ। व्यवहारभाष्य में कुडुक्क आचार्य का उल्लेख आता है।

कुडुक्क की पहचान आधुनिक कुर्ग से की जा सकती है। इस प्रदेश को कोडगू भी कहते हैं।

कर्णाटक में श्रवणबेलगोल दिगम्बर जैनों का प्रसिद्ध तीर्थ है। इसे जैनवद्री, जैन काशी अथवा गोम्मट तीर्थ भी कहा जाता है। यहाँ बाहुबलि स्वामी की सत्तावन फीट ऊँची मनोज मूर्ति है, जो दस-बारह मील से दिखाई देने लगती है। जैन मान्यता के अनुसार भद्रबाहु स्वामी और उनके शिष्य सम्राट् चन्द्रगुप्त मुनि ने यहाँ आकर तप किया था। यहाँ लगभग पाँच सौ शिलालेख मौजूद हैं। विन्ध्यगिरि और चन्द्रगिरि नामक यहाँ दो पर्वत हैं। इस तीर्थ की स्थापना राजमल्ल नरेश के राजमन्त्री सेनापति चामुण्डराय ने ईसवी सन् ६८३ के लगभग की थी।

मूडविद्री होयसल काल में जैनियों का मुख्य केन्द्र था। यहाँ अनेक मंदिर और सुन्दर स्थान हैं। यहाँ पर पुरुष-प्रमाण बहुमूल्य प्रतिमाएँ हैं; प्राचीन ग्रन्थों के यहाँ भण्डार हैं।

काकनल मूडविद्री से दस मील है। यहाँ बाहुबलि की विशाल प्रतिमा और

भारत के प्राचीन जैन तीर्थ

सुन्दर मान-स्तम्भ है। इस मूर्ति को सन् १४३२ में कारकल नरेश वीर पाड्य ने निर्माण कराया था।

वेणूर जैनो का केन्द्र था। कभी यहाँ अजलिर वश के जैन गजाओं का राज्य था। उनमें से वीर निम्मराज ने सन् १६०४ में बाहुबलि स्वामी की विशाल प्रतिमा बनवाई थी। यह स्थान मूडबिद्री से बारह मील और कारकल से चौबीस मील है।

मथुरा या दक्षिण मथुरा का उल्लेख प्राचीन जैन सूत्रों में आता है। इसे पाडु मथुरा भी कहते थे। कृष्ण के कहने से यहाँ पंच पांडव आकर रहे थे। यह स्थान व्यापार का बड़ा केन्द्र था। पुराने जमाने में यहाँ के पंडित प्रसिद्ध होते थे।

मथुरा की पहचान मद्रास सूबे के उत्तर में मथुरा नामक स्थान से की जाती है।

शब्दानुक्रमणिका

अ	—पावापुरी
अकबर ३, ३८, ४४, ५४	—मज्झिमपावा
अकपित २७	अभयकुमार २०
अक्षयवट ३८	अभयदेव ४८, ५३
अचल ३८	अमरावती ६२
अचलपुर ६२	अयोध्या ३३, ३५, ३८, ४७
—एलिचपुर	—साकेत १४, ३८, ३९, ४८
अचलेश्वर ५४	अरिष्टनेमि ५०
अचिरावती—राप्ती ३९	—तेमिनाथ ४४, ५४, ६३
अभिजयत १७	अर्बुद २६, ५४
अचेल २, ७	—आबू
अच्छ १६, १९, ४५	अलवर ५३
—अच्छा	अलसण्ड (एलेक्जेण्ड्रिया) ४, २४
अजन्ता ६३	—आलसन्द
अजलिर ६७	अवन्ति १५, १९, ५६, ५७
अजातशत्रु २०, २१, २२,	अवाह १९
—कूणिक २५, २७, ३५	अशोक १५, १९, २२, २९, ३७, ४२
अज्जइसिपालिया १७	४३, ४८, ५३, ५६
अज्जकुबेरी १७	अश्वमेन ५
अज्जजयन्ती १७	अश्ववावबोध ५२
अज्जतावसी १७	अष्टापद (कैलास) ३, २६, ४२
अज्जनाइली १७	असि ३५
अज्जवइरी १७	अस्सक १९
अज्जवेडय १७	अहार जी ६०
अज्जसेणिया १७	अहिच्छत्रा ४, ५, १६, २५, ४२, ४३
अट्ठयगाम ६, ८, २२	—अहिक्षेत्र
अणिकापुत्त ३८	अग १४, १६, १९, २४, ३०
अनाथपिण्डक ४०	—अग-मगघ
अपापा ३, ८, १२, १३, १६, २३, २७,	अगुत्तरनिकाय १९
—पापा ३५, ४१	अतरञ्जिया १७, १८, ४३
—पावा (दो पावा)	---अतरिञ्जया

अतरीक्ष पार्श्वनाथ	६२	आलमिया	१०, १२, ३७
अषपुर	६५	—आलबी	
अबलट्टिका	२२	आलसन्द (देखो अलसण्ड)	
अंबापाली	२८	आवश्यक चूर्णि ६, ४० ५०, ५४, ५८	
अबवन	३७	आवत्ता ग्राम	१०
असुवर्मा	२९	आसाम	३१
आ		आष्टे	६३
आइने अकबरी	४३, ५४		
आकर	५६	इ	
आकोला	६२	इक्ष्वाकु भूमि	३९
आचाराग सूत्र	२, ५	—अयोध्या	
आचाय धरसेन	५०	इन्द्रपुरग	१७
आदिनाथ	३८, ४७, ५४, ६३	इन्द्रपुर	४३
—ऋषभदेव		इन्दौर	५७, ५८,
आनर्त	४९	इन्द्रजीत	५८
आनर्तपुर	५२	इन्द्रपद	५८
—आनन्दपुर		—गजाग्रपद गिरि—दशार्णकूट	
आनन्द	२९	इन्द्रप्रस्थ	४६
आनन्दरक्षिण्य	६	—दिल्ली	
आन्ध्र	१५, ४९, ६५	इन्द्रभूति	२, ६, ७, २२ २३
आबू (देखो अबूद)		—गौतम स्वामी	
आभीर	६२	इन्द्रमहोत्सव	४२, ६४
आमलकप्पा	५, २९	इन्द्रमाला	३
आयागपट	२	इलापुर	६३
आरबक	२४	—एलोरा	
आराधना कथाकोष	६३	इलाहाबाद	३७, ३८
आर्य आषाढ	५६	—प्रयाग	
आर्य महागिरि	२, २२, २७,	इसिगुत्ति	१७
	३७, ५७, ५८	इसिदत्तिय	१७
आर्य मगु	४५, ६५	इसिपत्तन	३५, ३६
आर्य रक्षित	२, ४५, ५६	—सारनाथ	
आर्य स्कन्द	४०	ई	
आर्य सुहस्ति	२, १५, २२, ३७, ५७	ईरान	४९, ५६

उ		उमास्वाति	२२
उच्चावग	४५, ४६	उल्लगच्छा	१७
—बुलन्दशहर		उसमानाबाद	६२, ६३
—वारन		ऊ	
उच्चावगरी	१७, १८, ४५	ऊखलद	६३
उज्जयिनी	४, ३४, ३७, ४८,	ऊन	४, ५८
—उज्जैनी	५२, ५४, ५६, ५८, ६४	ऊर्जयन्त	३, २६, २९,
—उज्जैन		—गिरनार	४२, ५०, ५५
उडुवाडिय	१७	ऋ	
उत्कल	३०	ऋजुवाल्का	१२, २३
—उडीसा—ओडू		ऋषभदेव (देखो आदिनाथ)	
उत्तर कनाडा	६६	ऋषभपुर—राजगृह	२०
उत्तरद्वार	४०	ऋषितडाग	३१
उत्तरप्रदेश ७, १३, १४, १५, ३५, ४२		ऋषिपाल	३१
उत्तर बलिस्सह	१७	ए	
उत्तराध्ययन	२, ६	एटा	४३
उत्तरापथ	१, ३४, ४४, ४७	एडकाक्षपुर	५७
उत्पल	६	—एरकच्छ	
उदक पेढालपुत	६	—एरच्छ	
उदय	२०	एलिचपुर (देखो अचलपुर)	
उदयगिरि	३०, ३१	एलोरा (देखो इलापुर)	
उदयन	३७	ओ	
उदयन (महर्षि)	४८	ओडू (देखो उत्कल)	
उदयपुर	५५	औ	
उदायि	२१, २२	औदुम्बर	२७
उदुम्बर	१८	औपपातिक सूत्र	२४, २५
उदबरिज्जिया	१७, २७	औरगाबाद	६४
उदण्डपुर	२३	क	
—दण्डपुर		ककुत्था	४१
उद्देहगण	१७	कच्छ	२४
उभ्राट	११, ३३	कटपूतना	१०
उपदेशसप्ततिका	५३, ५५, ६२, ६३	कण्हसह	१७
उपमिति मवप्रपचकथा	५४	कदलीग्राम	१०

कदव	६६	कारकल	३, ६७
कमकखल	९	कालक आचार्य	४, ३४, ४९, ५६, ६४
कनाडी	६७	कालाय संनिवेश	९
कनिष्क	२	कालीदास	५७
कन्नौज	४३	कालियपुत्र	६
कान्हन	६२	काली	७
कपिलवस्तु	२१, ३६, ४१	कालि (नदी)	४३
कम्बोज	१९	काशगर	१
कयगला	९, २७	काशी	१६, १९, २०, ३५, ३६
—ककजोल		काशी-कोसल	१३, २८
करकण्डू	६३	कासव	६
करकण्डूचरिय	६२	कासवज्जिया	१७
कर्णाटक	६७	काचनपुर	१६, ३०
कर्लिग	१६, ३०	काचीपुर	६६
कर्लिगनगर—भुवनेश्वर	३०	—काजीवर	
कलबुक	१०	कापिल्यपुर	५, १६, २०, ४२
कल्पसूत्र	१६, २३, २७, ४५	—कपिल	
	५५, ६२	किरात	४, २४, ३२, ३९
कसया	४१	—चिलात	
ककाली टीला	२, ८८	किष्किधापुर	२६, ४१
कपिल	४२	—खुखुदो	
कपिलनगर	४२	कीकट	२०
क्षत्रि कुण्डग्राम	८, २८	—मगध	
क्षितिप्रतिष्ठित—राजगृह	२०	कुक्कुटाराम	३७
काकदी	१८, २६	कुटुक्क	४९, ६१, ६७
काकदिया	१७	—कुगं	
काठियावाड (देखो सौराष्ट्र)	४९	कुडुक्क (आचार्य)	६१, ६७
कादम्बरी	४९	कुणाल	१५, ४८, ५६
कान्यकुब्ज (देखो कन्नौज)		कुणाल नगर	५६
काबूल	५२	—उज्जैनी	
कामरूप	३१	कुणाल नगरी	३९
—आसाम		—श्रावस्ति	
कामिड्डिअ	१७	कुणाला	१४, १६, ३९

—उत्तर कोशल		—पटना	
कुण्डलमेष्ठ	५२	कुजरावर्त	५८
कुण्डग्राम	८, २८, २९	कुथलगिरि	६३
—कुण्डपुर	•	कुभकर्ण	५८
—बसुकुण्ड		कुभकारकृत	६५
कुण्डलपुर	५९	—दण्डकारण्य	
कुण्डाग	११	कुभारप्रक्षेप	४८
कुण्डिन नगर	६१	—वीतिभय पट्टन	
कुन्तल	६७	कूविय सनिवेश	१०
कुमारपाल	४९, ५०, ५२	कूणिक (देखो अजातशत्रु)	
कुमार श्रमण (कैजी)	६	कृष्ण	३५, ४४
कुमाराय सनिवेश	६, ९	कृष्ण (देखो कन्हन)	
कुमारी पर्वत—उदयगिरि	३०	केकय	४०, ४१
कुम्मार गाम	८	केकयी अर्घ	१६
कुम्म गाम	११	केदार	३६
कुरु	१६, १९, ३५, ४६, ४७	केवट्ट द्वार	४०
कुरु जागल	४२, ४६	केवल ज्ञान	१२, ३८, ४०, ४१
कुरुक्षेत्र	४८	केशीकुमार	२, ६, ७, ४०
कुलभूषण	६३	केसरीया जी	५५
कुलुहा	२६	कोच्छ	१९
कुल्पाक	६३	कोटिवर्ष	१६, १८, ३२, ३९
कुश	५३	कोडगू (देखिये कुडुक्क)	
कुशस्थल	४३	कोडिबरिसिया	१७, ३२
—कान्यकुब्ज		कोडिय गण	१७
कुशस्थली	४९	कोडबाणी	१७
—द्वारका		कोपारी	३३
कुशाग्रपुर—राजगृह	२०	कोमलिया	३४
कुशातं (दो कुशातं)	४३, ४४, ४९	कोमिल्ला	१८, ३४
कुशावर्त	१६	कोली	४१
कुशीनारा	२१, ३५, ३६, ४१	कोल्लाक सनिवेश	८, ९
—कुसावती		कोल्लाग सनिवेश	२९
—कसया		कोल्हापुर	६४
कुसुमपुर	२१, ६६	कोल्दुआ	२९

कोशल	१६, १९, २८, ३५, ३८	गगा	९, ३६, ३७, ४२
कोशला	३९	गडकी	११, २८, २९
कोशा	२२	—गडक	
कोसबिया	१७	गघार	१९, ४७
कोकण	६४, ६६	गाधिपुर	४३
कोशलिक	३८	—कान्यकुब्ज	
—ऋषभदेव		गामाय सनिवेश	१०
कोशावी	४, ५, १२, १४, १६,	गागेय	६
—कोसम	१८, २०, ३५, ३७, ३८	ग्वालियर	३, ५९
ख		गिरनार (देखो ऊर्जयन्त)	
खज्जूरवाहक	५९	गिरियज्ञ	५१, ६४
—खजराहा		गिरिव्रज	२०
खर्वट		—राजगृह	
खब्बड	३३	गुजरात	४९, ५१
—दासी खब्बड		गुणसिल	२१
खण्डगिरि	३०, ३१	—गुणावा	
खारवेल	३०	गुष्टूर	६६
खुखुदो (देखो किष्किधापुर)		गुरुदत्त	५९
खोमलिज्जिया	१७, ३४	गोदास गण	१७
—कोमलिया		गोदावरी	६५
खभात	५३	गोव्वर गाम	२३
ग		गोभूमि	११, ३३
गजपथा	४, ६५	—गोमोह	
गजपुर	१६	गोम्मट	६७
—हस्तिनापुर		गोयमज्जिया	१७
गजाग्रपद गिरि	४२, ५८	गोरखपुर	२६, ४१
—दशार्णकूट—इन्द्रदीप		गोलि	६६
गणतत्र	२८	गोल्ल	६६
गणराजा	१३	गोल्ल (आचार्य)	६६
गया	२६	गोशाल (मखलिपुत्र)	६, ९, १०, ११,
गवेघुया	१७		२२, २३, ३७, ४०
गर्गरा	२५	गोडवाना	६१
गर्दभिल्ल	४, ५६	गोडा	३९

गोड़	३१, ३२	चारण ? (वारण)	१७, ४५
गौतमस्वामी		चादूर	६२
(देखो इन्द्रभूति)		चापानेर	५३
घ		चित्तौड़	५५
घग्घर	३९, ४८	चिन्तामणि पार्श्वनाथ	५३
—घाघरा		चीन	१९, २२, ३२
घोसिताराम	३७	चूलगिरि शिखर	५८
च		चेटक	२८
चटगाँव	३४	चेति	१९
चणकपुर	२०	चेदि	१६, ५९
—राजगृह		चेर	६६
चण्डप्रद्योत	३७, ५६	चेलना	२७
—प्रद्योत		चोराय सनिवेश	९, १०
चण्डरुद्र	५६	चोल	६६
चतुर्विध सध	५	चौरासी	४५
चन्दनबाला	१२	छ	
चन्द्रगिरि	५५	छत्र	३
चन्द्रगुप्त	१५, ५६, ६६, ६७	छेदसूत्र	४७, ६४
चन्द्रगुफा	५०	छोटा नागपुर	३३
चन्द्रपुरी	३६	ज	
—चन्द्रावती—चन्द्रमाधव—चन्द्रानन		जगड़	२७
चन्द्रप्रभ (चन्द्रप्रभा अशुद्ध है)	३६	—मिथिला	
चन्द्रप्रभास	५०	जनक	२७
—देवपाटन—देवपट्टन		जनकपुर—मिथिला	२८, २९
चदनागरी	१७	जनकपुरी—मिथिला	२७
चदेरी	५९	जनपद	१९
चपरमणिज्ज	९	जनपद-विहार	१
चपा ३, ९, १२, १६, १८, २०,		जनपद-परीक्षा	१४
२१, २४, २५		जमुना	३८, ४३, ४४, ४६
चपिज्जिया	१७	—यमुना	
चाणक्य	६६	जम्बूद्वीप (भारतवर्ष)	१
चातुर्याम	५, ६, ७	जम्बूसड	१०
चामुण्डराय	६७	जम्बूस्वामी	४४, ४५

		त	
जयन्ती	६		
जयपुर	५४	तक्षशिला	४, २१, ३६, ४७, ४८
जरासंध	२०, ४४, ४९	तगरा	६२, ६३
जलमन्दिर	२३	— तेर	
जसभट्ट	१७	तपोदा	२१
जसवतपुर	५४	—तपोवन	
जभियगाम	१२, २३	—महातपोपतीरप्रभ	
ज्ञाताधर्मकथा	१, ७	तमिल	६
ज्ञातूखण्ड	८, २९	—दमिल-द्रविड	
जाखलौन	६०	तम्बाय	१०
जातक ३०, ३५, ४०, ४६, ४७, ५२, ६३, ६५		ताम्रलिप्ति	१६, १८, ३२
जापान	२२	—तामलुक	
जावा	१९, ३२	तामलित्तिया	१७
जाङ्गल	१६	तारगागिरी	५२, ५३
जिनकल्प	२, ६	तिब्बत	१९, २२
जिनप्रभसूरि	२१, २३, २७, ३६, ३९, ४०, ४२, ५४	तिरहुत	२७
		तीर्थमाला	३
जीवक	४७	तुगिक	२३
जीवन्तस्वामी प्रतिमा	३०, ३८, ५६	तुङ्गिय सन्निवेश	३८
जूनागढ	४९, ५०	तुङ्गिय नगरी	६, २३, ६५
जैतवन	४०	तुङ्गिय गाम	२३
जैन काशी	६७	तेजपाल	५०, ५३, ५४
जैनबद्री	३, ६७	तेर (देखो तगरा)	
जैन तीर्थो तो इतिहास	२३	तेलवाह	६५
जोणग	४	तेलगण	६५
—यवन		तेलगू	६५
जोधपुर	५४	तोसलि(तोतलि अशुद्ध छपा है)	१२, ३१
		—धौलि	
झूँसी	३८	तोसलि (आचार्य)	३१
		त्रिपिटक	५
टीकमगढ	६०	त्रिशला	८, २७, २८
		थ	
ठाणा	६५	थूणा (दो थूणा)	४८

धूणाक सनिखेख	९	दितिपयाग	३८
थोवन जी	५९, ६०	—प्रयाग	
द		दिल्ली (देखो इन्द्रप्रस्थ)	
दक्षिण द्वार	४०	दिव्यावदान	४८
दक्षिण मथुरा	६८	दीघनिकाय	२०
—मदुरा		दीनाजपुर	३२
दक्षिणापथ	१, ५६, ६१	द्वीपायन	४९
दढभूमि	१२, ३२	दुइज्जन्त	८
—धालभूम		दुघनी	६३
दण्डकारण्य (देखो कुम्भकारकृत)		देवगढ	५९, ६०
दण्डपुर (देखो उद्दण्डपुर)		देवपट्टन (देखो चन्द्रप्रभास)	
दतिया	५९	देवधिगणि क्षमाश्रमण	५१
दधिवाहन	१२, २४	देववाराणसी	३६
दन्तखात	३६	देवसूरि	५५
दन्तपुर	३०	देशभूषण	६३
दमुण्डा एण्ड देवर कन्द्री	३३	द्रोणगिरि	५९
दशपुर	५८	द्रौपदी	४२
—मन्दसौर		—पाचाली	
दशवैकालिक	२०, २४	घ	
दशार्ण	१६, ५७	घनकटक	६६
दशाणकूट	५८	घनपाल	४३
—गजाग्रपदगिरि— इन्द्रदीप		घनाशा	५५
दशार्णपुर	५७, ५८	घन्यकटक	३३
दशार्णभद्र	५८	घरणेन्द्र	४२
दहीगाँव	६३	धर्मचक्र	३
दम्भ	५४	धर्मचक्रभूमिका	४२, ४८
द्रविड	१५, ४९, ६१, ६६	धर्मताथ	३९
दासी खब्बडिया (देखो खब्बड)		धर्मसागर उपाध्याय	३
दासी खब्बड	१७	धाराशिव	६३
द्वारवती	४, १६, ४४, ४९, ५०	धालभूम (देखो दढभूमि)	
—द्वारिका		धुलेबाजी	५५
दिकसाल	६४	धौलि (देखो तोसलि)	
दिगम्बर	२, ३४, ५८	ध्रुवसेन	५२

न		प	
नगरी	५५	पटना (देखो पाटलिपुत्र)	
—मध्यमिका		पटवारी	१३
नन्दनवन	५०	पडरौना	४१
नन्दिग्राम	१२	पण्वाहणय	१७
नन्दिज्ज	१७	पत्तकालय	९
नन्दिपुर	१६	पद्मप्रभ	३७
नर्मदा	५७	पन्ना	५९
नल	६१	पपौरा जी	५९, ६०
नवादा	२१	पयाग पतिट्ठान	३७
नगला ग्राम	९	—प्रयाग	
नागपुर—हस्तिनापुर	४६	परशुराम क्षेत्र	६४
नागभूय	१७	परीक्षित	३७
नागराज	४२	पर्यूषण	६४
नागह्नुद	४२	पसनदि	३५, ३८
नाथनगर	२५	पजाब	४७
नालन्दा	९, २२, २३,	पृष्ठचम्पा	९, २५
	२९, ५१	प्रतिष्ठान (दो प्रतिष्ठान)	२१, ३८, ६४
नालन्दीय	२२	प्रत्यग्रथ	४२
नासिक्यपुर	६५	—अहिच्छत्रा	
—नासिक		प्रदेशी	९
निजाम स्टेट	६३	प्रद्योत (देखो चण्डप्रद्योत)	
निमार	५६	प्रबन्धकोश	१७
निम्मराज	६७	प्रभावकचरित	५३
निरयावलि	७	प्रभास (गणघर)	२०
निशीथ सूत्र	१४, २०	प्रभास	३६, ५०, ५४, ६५
निशीथ चूर्ण	४, ५६	—चन्द्रप्रभास	
नील पर्वत	१	प्रयाग	३३, ३५, ३८
नेमिनाथ (देखो अरिष्टनेमि)		—इलाहाबाद	
नेलक	६६	प्रवचनपरीक्षा	३
नैनागिरि	५९	पाकिस्तान	४८, ४९
नैपाल	२२, २९, ४१	पाखण्डिगर्भ	४५
न्यायविजय	२३	—मथुरा	

पाटन	५२	पाडुवर्धन	१८
पाटलिपुत्र	२१, २२, २९	पाड्य	६६
—पटना	६६	प्राकृत व्याकरण	६२
पाटलिपुत्र वाचना	२२	प्राचीन वश	२१
पाढ	१९	पीडधम्मिअ	१७
पाणिनी	४७	पुन्नकलस	१०
पाताल लिंग	२७	पुण्डरीक—शत्रुञ्जय	५०
पादलिप्त	६४	पुण्डवद्विण्या	१७, ३४
पादुका	३	पुण्ड्र	३१
पारस	४	पुण्ड्रवर्धन (दो पुण्ड्रवर्धन)	३४
—ईरान		पुण्णपत्तिया	१७
परिहासय	१७	पुन्नाट सध	६१
पारसनाथ हिल (देखो सम्मेदशिखर)		पुरीमताल (दो पुरीमताल)	४, ११, ३३
पालय	१२	पुरी	४, ३०
पालिताना	५१	—जगन्नाथ पुरी	
पावकगढ	५३	पुष्कर	५४
पावा (देखो अपापा)		पुष्करावती	४७
पावरिक	३७	पुष्करडिनी	५६
पार्श्वनाथ	२, ५, ६, ७, ८, २९, ३०, ३६, ४०, ४१, ४२, ५१, ५५, ६२	—उज्जैनी	
		पुष्पचूला	७
		पुष्पदन्त	५०
पार्श्वपित्त्य	५, ९	पुष्पपुर	२१
पावागिरि	५३	पुष्पभद्र	२१
पावागिरि (द्वितीय)	५८	पूर्णभद्र	२५
पांच महाव्रत	६, ७	पूर्वाद्वार	४०
पाचाल	१६, १९, ४२, ४३	पूसमितिज्जा	१७
—रुहेलखंड		पेढाल	१२
पाचाली (देखो द्रौपदी)		पैठन	६४
पाडव	४६, ४८, ५०, ५१, ५३, ६५, ६८	—प्रतिष्ठान	
		पोतनपुर	३८, ६४
पाडवचरित	५१	—प्रतिष्ठान	
पाडु मथुरा	६८	पोतलि	६४
—मदुरा		पोलास	१२

फ	बगाल	१३, १५ ३१
फर्रुखाबाद	४२	बभदीविया १७
फलोवी	५५	बभलिज्ज १७
फाहियान	२२, ३१, ४१, ४३	बबई ६५
फीजाबाद	३९	बस—वत्स १९
ब	ब्रह्मद्वीप	१८
बच्छ—वत्स	१९	ब्रह्मद्विपिका ६२
बज्जि	१९	ब्रह्मस्थल—हस्तिनापुर ४६
बटेसर	४४	बानगढ ३२
बडनगर	५२	बासीं टाउन ६३
बडवानी	५८	बालासर ३३
बडवाह	५८	बालि १९
बडागाँव	२३	बालुया गाम १२
बडोदा	५३	वावनगजा ५८
बनारस	३५, ३६, ३७, ४५	वावन गजी ३
—वाराणसी		बाहुबलि ४७, ६७
बनिया	२९	बादा ५९
—वाणियगाम		ब्राह्मणग्राम ९
बरमा	२२, ३४, ४०	ब्राह्मणकुण्डग्राम २८
—सुवर्णभूमि		विन्दुसार १५
बरार	६१	बिम्बिसार २०
बरेली	४३	—श्रेणिक
बबर	२४	बिहार ७, १३, १४, १९
बदवान	३४	बिहार शरीफ २१, २३
बलदेव	१०, ११, ६५	बुद्ध २१, २२, २४, २६, २७, २८, ३५, ३७, ३९, ४०, ४१, ४५, ४६
बलरामपुर	४०	बुद्धगया ३६
बलिस्सह गण	१७	बुलन्दशहर (देखो उच्चानगर)
बसाढ—वैशाली	२८	बुन्देलखण्ड ५९
बसुकुण्ड (देखो कुण्डपुर)	२	बृहत्कथाकोश ४४
बहली	४७	बृहत्कल्प सूत्र १४
बहुसालग	११	बृहत्कल्प भाष्य २, १४, ४४, ५४
बग	१६, १९, ३१	बृहदारण्यक ६१
—बगाल		

बेतवा	५७	भूतबलि	५०
बेनीमाधव (डॉक्टर)	३१	भृगुकच्छ	५२, ६५
बेन्या	६२	—भृगुपुर	
—बेत		—भडौच	
बेलुवन	२७	भेरा	४९
बोगरा	३४	भेलुपुर	३६
बोधिवृक्ष	३	भोगपुर	१२
		भगि	१६, २६, २७
		भडीर	४५
भगवती सूत्र	६, १९		
भडौच (देखो भृगुकच्छ)		म	
भदिया	२६	मडपत्तिया	१७
भदैनी	३६	मऊ	५८
भट्टजसिय	१७	मकसी पार्वनाथ	५८
भट्टगुत्तिय	१७	मगध	१०, १६, १९, २०,
भट्टिज्जिया	१७		२१, २४, २७, ३५, ४७
भदिय	१०, २६	मगधपुर—राजगृह	२०
भद्रकगुप्त	५६	मच्छ—मत्स्य	१६, १९, ५३
भद्रबाहु	२२, २९, ५६	मज्झमिया	१८, ५५
भद्रबाहु (द्वितीय)	६४	—मध्यमिका	
भद्रवती	४९	—मध्यमिका	
भद्राचार्य	४८	मज्झिमिल्ला	१७
भद्रिलपुर—भदिया	१६, २६	—मज्झिमा	
भरत	४७	मज्झिम पावा (देखो पावापुरी)	
भागलपुर	२४, २५	मणिकर्णिका	३६
भागीरथी	४२	मणिभद्र	२, ३३
भातकुली	६२	मथुरा	२, ३, ७, १६, १८
भावनगर	५१	—महोलि	२०, ३५, ४४, ४५,
भिलसा	५७		४९, ५२
भिल्लमाल	५४	मदन वाराणसी	४०
भिनमाल		मदुरा—महुरा	६८
—श्रीमाल		महणा	११
भुवनेश्वर	३०	मद्रास	६६, ६८
भूततडाग	५२	मधुमती	५१

—महुआ		महोदय	४३
मध्यदेश	२८, ३५, ६१	—कान्यकुब्ज	
मध्यप्रदेश	५६, ५९	महोलि (देखो सथुरा)	
मनमाड	६५	मखलिपुत्र (देखो गोशाल)	
मरुभूमि	५२	मग (देखो आर्य मगु)	
मलय	१२, १६, १९, २६	मडन मिश्र	२८
मलघारि	१७	मडिकुच्छ	२१
मल्ल	१९	मदसौर (देखो दशपुर)	
मल्ल	१३, ४१, ४८	मदार	२५
मल्ल पर्वत	२६	—मदिर	
—सम्मेदशिखर		—मदारगिरि	
मवाना	४६	माकदी	४२
महाकालेश्वर	५७	मागधी	१९
महागिरि (देखो आर्य महागिरि)		माघ	५४
हमातपोपतीरप्रभ (देखो तपोदा)		माणव	१७
महाभारत २०, २२, २४, ३०, ३१,		माणिक्यदेव	६३
३२, ३३, ३७, ३८, ४२,		माध्यमिका (देखो मज्झमिया)	
४४, ४८, ५०, ५३, ५६,		मानभूमि	२७
५७, ५८, ५९, ६१, ६५		मान्यखेट	६३
महाराष्ट्र	२, १५, ४९, ६४	मारवाड	५५
महावग्ग	२२	मालकूट	६६
महावस्तु	३०	मालवय	१६
महाबोर	६, ९, १०, ११, १२	मालवा	५५, ५६
	१३, २१, २२, २३, २४,	मालिज्ज	१७
	२५, २६, २७, २८, २९,	मालिनी	२४
	३१, ३२, ३३, ३५, ३७,	—चम्पा	
	३९, ४०, ४१, ५७	मासपुरी	१६, १८
महासेन	२३	मासपुरिया	१७
महास्थान	३४	महिष्मती—महेश्वरपुर	५७
महुआ (देखो मधुमति)		मागीतुङ्गी	६५
महेठि	४०	मिथिला	३, १२, १६, १८, २०,
—श्रावस्ति			२५, २७, २८
महेश्वरपुर	५७	मिदनापुर	३३

(१५)

मीरखेल	६३	य	
मुक्तागिरि	६२	यक्षायतन	२
मुगगरगिरि—मुगेर	२६	यमुना (देखो जमुना)	
मुजफ्फरगढ	४९	यवन द्वीप	२४
मुजफ्फरपुर	२८	यशस्तिलक	४४
मुनिचन्द्र	६, ९	यादव	४४, ४९, ६५
मुनिसुव्रतनाथ	५२	यूनान	६४
मूडविंदी	३, ६७	योजन = ५ मील	
मृगारमाता	४०	र	
मृगावती	३७	रज्जपालिया	१७
मृतगगातीर	३६	रज्जुगसभा	१३
मृत्तिकावती	१६, ५७	रतनशा	५५
मेगस्थनीज	२२	रत्न	२०
मेघकुमार	२०	रत्नपुरी	३९
मेघदूत	५७	—रत्नवाह	
मेडनारोड	५५	—रोडनार्ड	
मेतार्य	३८	रथयात्रा	१५, ३०
मेदार्य गोत्र	६	रथावर्त	४२, ५८
मेरठ	४६	रविषेण	४४
मेवाड	५५	राजगृह	५, ९, ११, १२ १६
मेहकलिज्जिया	१७	—राजगिर	१९, २०, २१, २२,
मेहिय	१७		२४, २५, ३७
मेहिल	६	राजधानी वाराणसी	३६
मेढियगाम	१२	राजपुर	३०
मैथिलिया	२७	राजपूताना	५३
मैसूर	६७	राजमल्ल	४४
मोगगरपाणि	२१	राजशेखर	१७
मोड	५२	राजीमती	५०
मोडेरगा	५२	राढ—लाढ	३२
मोराम सन्निवेश	८	राढाचार्य	६२
मोलि	१९	राणकपुर	५५
मोसलि	१२	राधाकृष्ण जालान	५०
म्हेसाणा	५३	रामचन्द्र	३५, ३८, ५३, ६५

शय्यमय	२०, २४	श्रवणबेलगोला	६६, ६७
शंकराचार्य	२८	श्रावस्ति	४, ५, ६, ९, ११, १२,
शस्त्र	३५		१६, १७, १८, २०, २७,
शस्त्रवती—अहिच्छत्रा	४२		३७, ३९, ४०, ४१, ४५
शाक्य	४१	—सहेटमेट	
शालिवाहन—सातवाहन	६४	श्रीक्षेत्र कुभोज	६४
शाह	४९, ५६	श्रीपाल	६२
शाह जी की ढेरी	४८	श्रीपर्वत	३६
शाहपुर	४९	श्रीमाता	४४
शाडिल्य	१६	श्रीमाल	५४
श्यामाक	१२	श्रेणिक	२०, २५
शिखर—सम्मदेशिखर	२६	—विम्बिसार	
शिरपुर	६२	श्वेताम्बर	२, २९, ५६
शिवजी	२४	श्वेतिका—सेयविया	१६, ४१
शिवपुर—अहिच्छत्रा	४२	स	
शिवराजा	४६	सचेल	२, ७,
शिवि	४७	सनावन	४९
शिशपाल	५९	—सिनावन	
शीतलनाथ	३६	समतट	३१
शीलविजय	३	समराइच्चकहा	४२
शुक्तिमिती	१६, ५९	समित	६२
—सुतिवइया		समुद्र	६५
शुष्क राष्ट्र	४९	समतभद्र	६६
शूरसेन—सूरसेन	१६, १९, ४३, ४४	सम्प्रति	१५, ४९, ५५, ६१,
शूर्पारक	६५		६४, ६५, ६७
—सोपारा		सम्मदेशिखर	३, ५, २४, २६, ५५
शूलपाणि	८, २९	—समाधिशिखर	
शोलपुर	३१	—समिदगिरि	
शोलापुर	६४	—पारसनाथ हिल	
शौरसैनी	४४	सरयू	३९
शौरि	४४	सरस्वती	३८, ४८, ५२
शौरीपुर—सूर्यपुर	१६, ४४	सर्वतोभद्र	५३
श्रमण पूजा	६४	सहेट-महेट (देखो श्रावस्ति)	

(१६)

सकिस्स	४३	सिणवल्ली (देखो सनावन)	
—सकिस		सि-तो	१
सकासिया	१७	सिद्धत्थपुर	११, १२
सखडि (उत्सव)	३१, ५०, ५४	सिद्धाषि	५४
सथाल परगना	२७	सिद्धवरकूट	५८
सभवनाथ	४०	सिद्धसेन	५२, ५६
सभुत्तर—सुम्होत्तर	१९, ३२	सिद्धशिला	२९, ५२
स्कन्द	१२	सिद्धार्थ	८
स्तवनिधि	६४	सिन्ध	४७
स्तम्भन	५३	सिन्धु	४७, ४८
—खम्भात		सिन्धु—सौवीर	१६, ४८
स्थविरावति	१६	सिरसी	६६
स्वर्गद्वार	३९	सिरोही	५४
स्वर्ण	२०	सिहपुर	३०
मुवर्णभूमि	२२, २५, ३४, ६५	सिहपुर—सारनाथ	३६
—बरमा		सिहल	२४
साकेत	५, १४, १६, २०, ३८, ३९	—लका	
—अयोध्या	४८	सीता	१
मागर	५९	सुकुमालिया	६६
सागरखमण	३४	सुणीव	६५
सागरदत्त	५२	मुच्छेता	१२
सातवाहन	६४	मुत्तिवइया	१७
सानुलट्टिय	१२	—सोडत्तिया	
सारनाथ—सारङ्गनाथ (देखो इसिपत्तन)		मुधर्मा	२३
सालज्जा	११	मुनीध	२२
सालाटवी	३३	मुपश्य	२१
सालिसासय	१०	मुपार्श्वनाथ	३६
साहु टोडर	४४	मुप्रनिष्ठानपुर	३८
मवित्थिया (देखो श्रावस्ति)		—प्रतिष्ठानपुर	
स्थाणुतीर्थ	४६, ४८	सुब्भभूमि—सुद्धा	१०, ११, ३२
—स्थानेश्वर		सुभूमिभाग	१४, ३९
स्थानाग	२०	सुभाम	१२
सिकन्दराबाद	६३	सुमगल गाम	१२

सुम्ह	३२	ह	
सुरप्रिय	५०	हजारीबाग	२६, २७
सुरभिपुर	९	हत्थकप्प	५१
सुवन्नखलय	९	—हस्तकवप्र	
सुवर्णकूला	९	—हाथब	
सुवर्णभद्र	५८	हत्थिलिज्ज	१७
सुवीर	४४	हत्थिस्सीस	१२, ३४
सुहस्ति (देखो बार्थ सुहस्ति)		हनुमान	६५
सुसुमारपुर	१२	हरिद्वार	३५
सूत्रकृताग	६, २२	हरिभद्रसुरि	४२
सूत्रकृताग चूर्णि	५२	हरिवंशपुराण	५७, ६६
सूत्रपिटक	४०	हर्षपुरीमगच्छ	१७
सूर्यपुर	४४	हलेदुय	९
स्थूणा	१४	हस्तिगुफा	३०, ३१
स्थूलभद्र	२, २२,	—हाथी गुफा	
	२९, ४८	हस्तिद्वीप	२२
सेयविया	९, १२, ४१	हस्तिनापुर	३, ५, २०, ३७, ४६
—सेतव्या		हस्तिपाल	१३
सेसवविया	२२	हटरगज	२६
सेदपा	५९	हातकलगणा	६४
सोपारा	६५	हारिममालागारी	१७
सोनागरि	४९	हालाहला	४०
सोमदेव	४४	हालिज्ज	१७
सोमधर्म	५३	हिमवत	१
सोमनाथ	५०	—हिमालय	
सोमभूय	१७	हीरविजय	३, ४४
सोमा	६	हुअन-साग	२१, २२, २८, ३२, ३४,
सोरट्ठिया	१७		३६, ४१, ४२, ४३, ४५,
सोहाबल	३९		४८, ५१, ५४, ५६, ५९, ६६,
सीराष्ट्र	१६, ४९	हेमचन्द्र	३६, ५२, ६२
—काठियावाड		हैदराबाद	६२, ६३
सीबीर	४८	होयसल	६७

